अध्याय 4

लोक वित्त की पुनर्संरचना

4.1 इस आयोग को, विचारार्थ विषय (टीआरओ) के खंड 5 के अंतर्गत यह कहा गया कि वह "संघ तथा राज्यों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करे और एक ऐसी योजना का सुझाव दे जिसके द्वारा सरकार बजटीय संतुलन की पुनर्स्थापना करने, वृहद तौर पर आर्थिक स्थायित्व प्राप्त करने और साम्यिक विकास सहित ऋण में कमी लाने के लिए लोक वित्त की पुनर्संरचना के संबंध में सामूहिक तथा विविध प्रकार से प्रयास कर सके।" इसी प्रकार के विचारार्थ विषय को पहली बार ग्यारहवें वित्त आयोग को प्रस्तुत किया गया था और जिसमें बजटीय संतुलन तथा वृहद् आर्थिक स्थायित्व के संबंध में उल्लेख किया गया था। पुनर्संरचना से संबंधित योजना की आवश्यकता अब ऋण में कमी लाने तथा साम्यिक विकास के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए भी है।

4.2 टीओआर के कुछ अन्य भागों का पुनर्संरचना संबंधी योजना पर प्रभाव पड़ेगा। पैरा 6(iv) में उल्लेख है "..... उद्देश्य न केवल सभी राज्यों तथा केन्द्र के राजस्व लेखे से संबंधित प्राप्तियों तथा व्यय को संतुलित करना है, बल्कि पूंजी निवेश तथा राजकोषीय घाटे में कमी लाने के लिए अधिशेषों का सृजन करना भी है।" पैरा 6(v) में केन्द्र के लिए कर-स.घ.उ. अनुपात तथा राज्यों के लिए कर-जीएसडीपी अनुपात जुटाने की आवश्यकता पर जोर है। ऋण में कमी लाने के परिप्रेक्ष्य में, पैरा 9 में व्यवस्था है कि राज्यों के ऋण के संबंध में ऐसे सुधारात्मक उपाय सुझाए जांए जो वृहद् आर्थिक स्थायित्व तथा ऋण की निरन्तरता के अनुरूप हों। हमने लोक वित्त की पुनर्संरचना हेतु एक समेकित ढांचे का विकास किया है जो इन परस्पर संबंधित उद्देश्यों की पूर्ति कर सके।

4.3 बजटीय असंतुलन के मुद्दे का उल्लेख करते हुए, ग्यारहवें वित्त आयोग (ईएफसी) के ध्यान में आया है कि राजस्व घाटा केन्द्रीय और राज्य बजटों में "अनिष्टकर रूप से जुड़" गया है और एक ऐसे लोक वित्त की पुनर्संरचना की जरुरत है जो "ऋण और घाटे के स्व-बेमियादी उच्चक्र" से दूर हो। ईएफसी, केन्द्र तथा राज्य सरकारों के राजकोषीय समायोजन कार्यक्रम को तैयार करने में प्रयासरत रहा जिसका अभिप्राय राज्यों के राजस्व घाटे को समाप्त करने तथा केन्द्र के राजस्व घाटे को वर्ष 2004-05 तक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 1 प्रतिशत तक नीचे लाना था। समग्र राजकोषीय घाटा लक्ष्य जीडीपी का 6.5 प्रतिशत निर्धारित था जिसमें केन्द्र का लक्ष्य 4.5 प्रतिशत तथा राज्यों का 2.5 प्रतिशत था। जीडीपी अनुपात से संबद्ध सम्मलित ऋण को 55 प्रतिशत तक घटाना था। केन्द्र के लिए राजस्व प्राप्तियों से संबद्ध ब्याज भुगतान का अनुपात पांच वर्षों के भीतर 48 प्रतिशत तक नीचे लाने का लक्ष्य था और दीर्घावधि में इसे 35 प्रतिशत तक घटाना था। इस संबंध में राज्यों के लिए लक्ष्य 18 प्रतिशत निर्धारित किया गया था।

4.4 इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक राजकोषीय समायोजन के लिए सम्मलित कर-जीडीपी अनुपात 17.7 प्रतिशत तक जुटाना अपेक्षित था और जिसमें केन्द्र का कर-जीडीपी अनुपात 10.3 प्रतिशत था। पुनर्संरचना हेतु ईएफसी की योजना में जीडीपी अनुपात से सम्बद्ध कुल राजस्व प्राप्तियां 20 प्रतिशत के आस-पास रहीं। सम्मिलित राजस्व व्यय के सन्दर्भ में, व्यय के सम्बन्ध में जीडीपी में 23.7 प्रतिशत अंक की कमी का अनुमान था जिसमें तद्नुरूपी पूंजी व्यय में वृद्धि सीमान्त रूप से अधिक महत्व की थी। स्पष्ट तौर पर, सरकारों के दोनों स्तरों पर इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में पर्याप्त चूक हुई है। यद्यपि वर्ष 2004-05 के लेखा आंकड़े बाद में ही उपलब्ध होंगे, लेकिन 2002-03 के आंकड़ों के अनुसार केन्द्र तथा राज्यों का सम्मिलित राजस्व घाटा लगभग 6.7 प्रतिशत था और ऋण-जीडीपी अनुपात जीडीपी (1) का लगभग 76 प्रतिशत था। जहां एक और निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में कुछ हद तक मिली असफलता राजस्व प्रयास में कमी तथा व्यय नियंत्रण में बरती शिथिलता के कारण मिली, वहीं ईएफसी की आलोच्य अवधि के पहले तीन वर्षों के दौरान आर्थिक विकास में भी मंदी देखी गयी। वर्ष 2000-01 से 2003-04 के दौरान चार वर्षों में चालू बाजार मूल्यों पर जीडीपी के सम्बन्ध में विकास दर नाममात्र 7.9, 9.7, 8.2 तथा 12.3 प्रतिशत थी। ईएफसी ने 13 प्रतिशत की नाममात्र विकास दर की प्रवृत्ति दर्शाई। यदि केन्द्र का राजकोषीय घाटा अन्तिम तौर पर समाप्त हो जाता है जैसाकि वर्ष 2004-05 के बजट में यह जीडीपी का 4.4 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है, तो यह आंशिक रूप में ईएफसी में निर्धारित लक्ष्यों से अपेक्षाकृत कम हो जाएगा।

4.5 संस्थानिक वातावरण में कुछ महत्वपूर्ण सुधार हुए हैं जो राजकोषीय सुधारों में सहायक हैं। केन्द्र सरकार ने वर्ष 2003 में एक राजकोषीय उत्तरदायित्व तथा प्रबन्ध अधिनियम (एफआरबीएमए) अधिनियमित किया है जिसमें इसके नियमों के तहत राजस्व घाटे को वर्ष 2007-08 तक समाप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। साथ ही राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 3 प्रतिशत तक लाना प्रस्तावित है। जुलाई 2004 के बजट में यह सुनिश्चित किया गया है कि लक्षित वर्ष 2008-09 तक शिफ्ट कर दिया जाए। कर्नाटक, केरल, तमिलानाडु, पंजाब तथा उत्तर प्रदेश के राज्यों में राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान अधिनियमित किया गया है। कईं राज्यों ने ईएफसी की सिफारिशों के आधार पर सृजित मध्यावधि राजकोषीय सुधार सुविधा के परिप्रेक्ष्य में विशिष्ट मॉनीटरिंग योग्य लक्ष्यों सहित मध्यावधि सुधार कार्यक्रम तैयार किए हैं। हम इन परिवर्तनों को सम्भावित रूप से अपेक्षाकृत प्रभावी तथा पारदर्शी राजकोषीय प्रबन्ध में सहायक के बतौर ध्यान में रखते हैं।

4.6 पुनर्संरचित लोक वित्त का उद्देश्य वृहद् आर्थिक स्थायित्व तथा राजस्व लेखा शेष प्राप्त करना है जिस हेतु एक व्यापक

विश्लेषणात्मक ढांचे की आवश्यकता है। सरकार के व्यय के आकार तथा संरचना का विकास, मुद्रास्फीति, ब्याज दर तथा बाह्य लेखे पर पड़ने वाले प्रभाव को एक ढांचे के अन्तर्गत विचार करना होगा और जिसमें संगत पारस्परिक सम्बन्धों तथा फीडबैंक को ध्यान में रखा जाता है। अन्य बातों के अलावा, लोक वित्त की संरचना व्यय के आकार तथा संरचना से सम्बद्ध है। जीडीपी के अनुपात के रूप में सरकार का व्यय अन्य कई देशों की अपेक्षा कम है। सर्वोच्च प्राप्य विकास दरों की प्राप्ति को सुविधाजनक करने की दृष्टि से, सरकारी व्यय के सही आकार तथा सही संरचना को प्राप्त करने और गरीबी घटाने तथा स्वास्थ्य और शिक्षा के प्रावधान सहित सरकार के सामाजिक दायित्वों को पूरा करना लोक वित्त की पुनर्सरंचना हेतु किसी योजना के अभिन्न अंग माना जाना चाहिए। इसके लिए समग्र राजकोषीय असंतुलन को घटाते हुए विकास को तीव्र करने हेतु सामाजिक तथा आर्थिक आधार-भूत संरचना में सार्वजनिक व्यय की आवश्यकता होती है।

केन्द्र तथा राज्य सरकारों के विचार

4.7 अपने ज्ञापनों में तथा आयोग के साथ विचार-विमर्श में अधिकांश राज्य सरकारों ने लोक वित्त की पुनर्संरचना की आवश्यकता को स्वीकार किया। कुछ राज्यों ने सुझाव दिया कि पुनर्संरचना की प्रगति की मॉनिटरिंग किसी स्वतंत्र एजेंसी से करायी जाए न कि केन्द्र सरकार से। राज्यों द्वारा कई विशिष्ट सुझाव दिए गए। कुछ सामान्य व्यक्त सुझावों को नीचे दिया जा रहा हैः

(i) आयोजना सहायता के संबंध में राज्यों ने सुझाव दिया कि सामान्य संवर्गों वाले राज्यों के मामले में, अनुदान-ऋण अनुपात को मौजूदा 30:70 से 50:50 करके संशोधित किया जाए। कुछ सुझावों में,70:30 का अनुपात भी सुझाया गया। विशेष संवर्ग राज्यों के मामले में, कुछ मामलों में मौजूदा अनुपात संघटक को 90:10 अनुपात के बजाय 100 प्रतिशत बढ़ाने का सुझाव दिया गया।

(ii) राज्य सरकारों को केन्द्र द्वारा ऋण प्रदान करने में, अस्थाई ब्याज दर का उपयोग किया जाए तथा राज्यों की बाजार में अपेक्षाकृत अधिक पहुँच की अनुमति प्रदान की जाए।

(iii) सभी केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं को राज्यों को निधियों सहित अन्तरित किया जाए।

(iv) आयोजना तथा आयोजना-भिन्न व्यय के बीच के अन्तर को समाप्त किया जाए क्योंकि यह अन्तर वित्तीय संसाधनों के असंतुलित प्राथमिकता क्रम की दिशा में जाता है और जिससे अनुरक्षण व्यय की आवश्यकता की उपेक्षा होती है।

(v) राज्य राजकोषीय सुधार सुविधा में, मूल्यांकित अन्तर अनुदानों पर कोई रोक नहीं होनी चाहिए।

(vi) राज्य स्तरीय सरकारी उद्यमों की पुनर्संरचना की आवश्यकता है।

(vii) ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय निकायों के सम्बन्ध में संविधानिक संशोधनों के फलस्वरूप, उनके द्वारा संसाधनों की अधिक मांग की जाती रही है, और राज्य तीव्र वित्तीय दबाव से ग्रस्त हैं। किसी भी पुनर्संरचना में सरकार को इन सभी त्रिस्तरीय व्यवस्थाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

(viii) कर सुपुर्दगी की समीक्षा में राज्यों के सम्बन्ध में सेवाओं की सुपुर्दगी को भी शामिल किया जाना चाहिए।

4.8 केन्द्र सरकार ने अपने ज्ञापन में, एफआरबीएमए के परिप्रेक्ष्य में नियुक्त कार्यदल की रिपोर्ट का हवाला दिया है जिसका केन्द्रीय वित्त की पुनर्संरचना से सम्बन्ध मुद्दों पर प्रभाव पड़ता है। इस कार्यदल ने समायोजन उपाय की सिफारिश की है जो राजस्व अर्जन सहित प्रारम्भिक राजकोषीय समेकन पर जोर देती है तथा जीडीपी के सापेक्ष में पूंजी व्यय बढ़ाती है। इसी प्रकार के विचार राजकोषीय नीति कार्ययोजना विवरण में भी व्यक्त किए गए हैं जिसे एफआरबीएमए के तहत अपेक्षित वर्ष 2004-05 के साथ प्रकाशित किया गया था। लोक वित्त की पुनर्संरचना के सम्बन्ध में, कार्यक्रम तैयार करते समय हमने केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा व्यक्त विचारों को ध्यान में रखा है।

विकास तथा वृहद् आर्थिक स्थायित्व

4.9 वृहद् आर्थिक स्थायित्व अर्थव्यवस्था की सक्षमता का उल्लेख करता है जो पूर्ण रोजगार के अनुरूप उत्पादन के स्तरों पर नजदीक से निगाह रखता है, साथ ही स्वीकार्य सीमाओं के अन्तर्गत मुद्रास्फीति भी नियंत्रित की जाती है। व्यवहार में, संरचनात्मक कठिनाइयां हो सकती हैं जो अर्थव्यवस्था को दीर्घकालिक आधार पर पूर्ण रोजगार के स्तर से नीचे रखती हैं। इसलिए, स्थिरीकरण से सम्बन्ध मुद्दों को "सम्भाव्य" विकास अथवा उत्पादन के स्तरों की प्रवृत्ति के संदर्भ में समझा जाना चाहिए। सम्भाव्य उत्पादन के मापन में यह अपेक्षा होती है कि चक्रीय विविधताओं को दूर किया जाए ताकि उत्पादन के स्तर की पहचान इसके दीर्घकालिक उपाय के साथ की जाए। मंदी की अवधि में, वास्तविक उत्पादन सम्भाव्य उत्पादन के स्तर से नीचे गिर सकता है। विस्तार की अवधि में, मुद्रास्फीति अपने दीर्घकालीन स्तरों से आगे बढ़ सकती है। दोनो ही विचलनों से स्थायित्व को खतरा पैदा होता है। स्थिरीकरण का उद्देश्य अर्थव्यवस्था को विकासोन्मुख बनाए रखना है जो इसके दीर्घकालिक विकास मार्ग के निकट हो, साथ ही स्वीकार्य सीमाओं के अन्तर्गत मुद्रास्फीति दर को नियंत्रित किया जा सके।

4.10 ठोस स्थिति में, अर्थव्यवस्था की अपने दीर्घकालीन उपाय की ओर लौटने की निर्मित सक्षमता होगी। राजकोषीय नीति के परिप्रेक्ष्य में, यह सक्षमता स्वचालित स्थिरीकारियों द्वारा मुहैया करायी जाती है। स्वचालित स्थिरीकारियों का अस्तित्व तभी है जब लोक वित्त संरचना इस प्रकार की हो कि करों की प्रभावनीयता सामान्य उत्पादन में परिवर्तन के फलस्वरूप हुए व्यय की तुलना में अपेक्षाकृत ज्यादा हो। इस प्रकार, किसी

मुद्रास्फीतिकारी स्थिति में व्यय से कर अपेक्षाकृत अधिक आहरित होंगे और जो वर्धित सरकारी व्ययों की तुलना में होंगे और कुल व्ययों में निवल संकुचन होगा तथा जिससे चक्रीय शिथिलता आएगी। मंदी की स्थिति में, सरकारी व्यय आहरित कराधान की अपेक्षा व्यय के सम्बन्ध में अधिक योगदान प्रदान करते हैं जिससे मंदी का प्रभाव कम होता है। यदि स्वतः प्रतिक्रियाएं पर्याप्त नहीं हैं, विवेकाधीन राजकोषीय हस्तक्षेपों की आवश्यकता स्थिरीकरण हेतु होती है। भारतीय रिजर्व बैंक (2) ने अपनी करेंसी तथा वित्तपोषण सम्बन्धी वर्ष 2001-02 की रिपोर्ट में अनुमान लगाया है कि संयुक्त सरकारी क्षेत्र की प्राप्तियों की मूल्य सापेक्षता 1.07 है जबकि सम्मिलित ब्याज-भिन्न व्यय 1.06 है। चूंकि इन दोनों के संदर्भ में अन्तर कम है इसलिए भारत में स्वतः स्थिरीकरण कमजोर है। इसलिए प्रभावी विवेकाधीन कार्रवाई स्थिरीकरण के लिए आवश्यक है।

4.11 स्थिरीकरण के साथ विकास के मुद्दे पर विचार करने के लिए, इस बात की जांच करना आवश्यक है कि (क) क्या सम्भाव्य उत्पादन अपने विकास उपाय के साथ पूर्ण रोजगार स्तरों से बराबर नीचे बना रहेगा, और (ख) क्या किसी आलोच्य वर्ष में वास्तविक उत्पादन सम्भाव्य उत्पादन के विकास उपाय से अधिक अथवा नीचे है। दोनो ही मामलों में, लोकवित्त की संरचना तथा राजकोषीय नीति के प्रवाधान की अपनी भूमिका है। जब दीर्घकालिक विकास उपाय पूर्ण रोजगार स्तरों से नीचे हो, तो यह वांछनीय है कि लोक वित्त इस प्रकार निर्माण किया जाए कि वह आपूर्ति सम्बन्धी बाधाओं जैसे संरचनात्मक अवरोधों को दूर करे तथा सम्भाव्य उत्पादन को पूर्ण रोजगार स्तरों के निकट लाए। इस सन्दर्भ में, सरकारी व्यय की संरचना विशेषकर पूंजी व्यय का भाग और इसका आवंटन महत्वपूर्ण हो जाता है। दूसरे मुद्दे के सम्बन्ध में, स्थायित्व प्राप्त करने हेतु, सम्भाव्य उत्पाद की अपने विकास उपाय सहित चक्रीय गतिशीलता के परिप्रेक्ष्य में सकल सरकारी मांग प्रबन्धन प्रांसगिक हो जाता है।

4.12 सरकारी व्ययों के वित्तपोषण की विधि भी स्थिरीकरण तथा विकास को प्रभावित करती है। सरकार को उधारों अर्थात राजकोषीय घाटे का आश्रय उस सीमा तक लेना पड़ता है जहां तक उसका व्यय राजस्व तथा ऋण-भिन्न पूंजी प्राप्तियों द्वारा कवर नही होता है। घरेलु बाजार उधार पर अत्यधिक निर्भरता ब्याज दर को बढ़ा सकती है जबकि केन्द्रीय बैंक से उधार पर अत्यधिक निर्भरता मुद्रास्फीति की दर को अनुचित तरीके से बढ़ा सकती है। कतिपय परिस्थितियों के अधीन विदेशी उधारों का उपयोग विनिमय दर पर दबाव डाल सकता है। राजकोषीय घाटे को भी दो संघटकों को ध्यान में रखते हुए देखने की जरूरत हैः संरचनात्मक अथवा दीर्घकालिक संघटक तथा चक्रीय संघटक जो दीर्घकालिक औसत से विचलन प्रदर्शित करता है। चक्रीय अथवा राजकोषीय घाटे के अस्थाई संघटक का उपयोग उत्पादन की विकास प्रवृत्ति में होने वाली घट-बढ़ को स्थिर करने के लिए किया जा सकता है। भारत में राजकोषीय घाटा मुख्यतः संरचनात्मक स्वरूप का है और चक्रीय संघटक महत्ता की दृष्टि से अल्प है।

4.13 हमारी राजकोषीय सुधार नीति विकास पर केन्द्रित है। विकास, अन्य कारकों के साथ-सात निवेश की दर पर निर्भर करता है जो क्रमशः बचत दर पर निर्भर है। बचत दर अन्य बातों के साथ-साथ सरकार के राजस्व घाटे पर निर्भर करती है जो सरकार के निवल निर्वचन के बराबर होती है। दूसरे शब्दों में, घरेलु क्षेत्र की बचत दर, निजी कारपोरेट क्षेत्र तथा सरकारी क्षेत्र सहित कुल बचत दर जब तक कि सरकार का योगदान नकारात्मक रूप से अर्थात् निजी क्षेत्र की बचतों का आहरण उपयोग व्यय के लिए किया जाता है, सम्भाव्य रूप से प्राप्य की अपेक्षा कम होती है। हम दीर्घकालिक विकास प्रोफाइल और साथ ही बचत निवेश दरों के नीचे होने की समीक्षा करते हैं जो नम्बे के दशक के अनुभवों पर केन्द्रित है ताकि इन अनुभवों से विकास पर सरकार के निर्बचतों के घातक प्रभावों को रेखांकित किया जा सके।

4.14 चार्ट 4.1 विकास दरों को प्रदर्शित करती है जो वर्ष 1993-94 के स्थिर मूल्यों पर वर्ष 1950-51 से 2002-03 की अवधि तक उपादान लागत पर जीडीपी की वास्तविक वार्षिक विकास सहित उत्पादन की प्रवृत्ति स्तरों से व्युत्पन्न है। यह विश्लेषण उपादान लागत पर जीडीपी के सन्दर्भ में है ताकि

चार्ट-4.1

वास्तविक विकास दर तथा स्थिर मूल्यों पर जीडीपी प्रवृत्ति

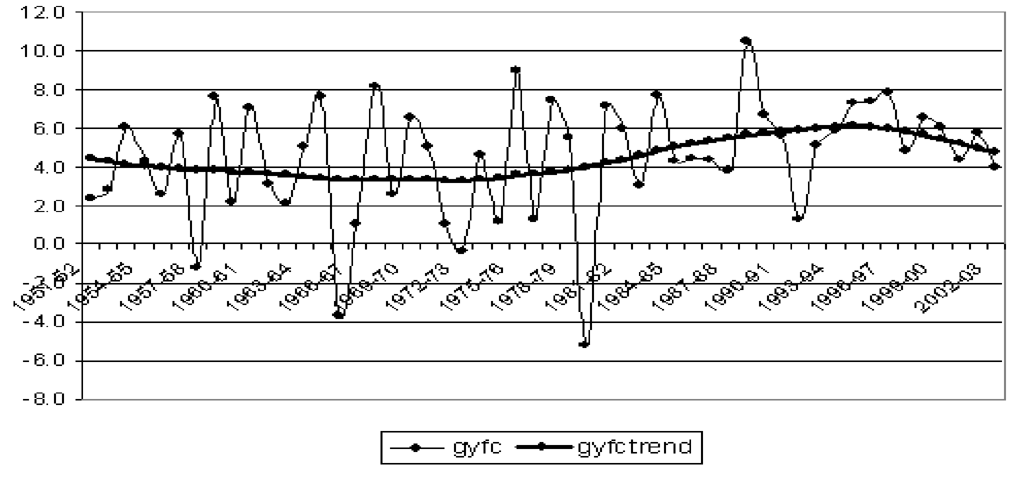

उत्पादन में विकास के सम्बन्ध में निष्पादन पर ध्यान केन्द्रित किया जा सके। सब्सिडियों को घटाकर अप्रत्यक्ष कर वे राजकोषीय उपाय हैं जो जीडीपी को बाजार मूल्यों पर जीडीपी के उपादान लागत के रूप में लेते हैं। विकास प्रवृत्ति का अनुमान सांख्यिकीय फिल्टर (4) का उपयोग करके लगाया गया है। चार्ट 4.1 यह प्रदर्शित करता है कि दीर्घकालिक चक्रीय उपाय उत्पादन के पश्चात किए जाते हैं जहां सत्तर के दशक के प्रारम्भ में विकास प्रवृत्ति 4.5 प्रतिशत से कुछ गिरकर 3.3 प्रतिशत हो गयी थी जिसके बाद यह विकास प्रवृत्ति बढ़कर नब्बे के दशक के मध्य में 6 प्रतिशत के स्तरों से ऊपर हो गयी थी। तब से यह विकास प्रवृत्ति दर में 5 प्रतिशत से नीचे की गिरावट को व्यक्त करता है जो वर्तमान में हमारे लिए चिन्ता का मुख्य कारण है।

4.15 यह भी ध्यान में रखने की बात है कि विकास दर प्रवृत्ति से काफी मात्रा में आया अन्तर नब्बे के दशक के अन्त में देखा गया। वास्तविक तथा मुद्रास्फीति दरों की प्रवृत्ति का तद्नरूपी विश्लेषण यह संकेत देता है कि वर्ष 1999-00 से 2002-03 के दौरान मुद्रास्फीति दर की प्रवृत्ति सीमान्त रूप से 5 प्रतिशत नीचे आयी है। यद्यपि वास्तविक मुद्रास्फीति दर 4 प्रतिशत के नीचे के स्तर पर बनी रही। ये स्पष्टतः मंदी के संकेत है जो वर्ष 2002-03 तक निरन्तर बनी रही। सारणी 4.1 वास्तविक, प्रवृति तथा वर्ष 1990-91 से 2002-03 तक विकास तथा मुद्रा स्फीति के अवशिष्ट संघटकों को प्रदर्शित करता है। वर्ष 2003-04 में कृषि में ठोस सुधार तथा वर्ष 2003-04 तथा 2004-05 में उद्योग में बढ़ोतरी के परिणामस्वरूप, वर्ष 2003-04 तथा 2004-05 के दौरान समग्र विकास दर क्रमशः 8 प्रतिशत तथा 6 प्रतिशत आंकी गयी। अनवरत आधार पर 7 प्रतिशत से अधिक की विकास दर प्राप्त करने के लिए निवेश दर को नब्बे के दशक के मध्य में प्राप्त स्तरों के बराबर या उससे अधिक के स्तरों में बढ़ाना होगा। बचत दर को भी तद्नरूप बढ़ाना होगा।

4.16 सारणी 4.2 घरेलू, निजी कारपोरेट तथा सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर को प्रदर्शित करती है। सारणी 4.3 निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों के सम्बन्ध में सकल घरेलू निवेश की दर उपलब्ध कराती है। सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि वर्ष 1998-99 में यह नकारात्मक हो गयी और नकारात्मक बचतों की मात्रा वर्ष 2001-02 तक बढ़ती रही। इसके अन्तर्गत, प्रशासनिक तथा विभागीय उद्यमों सहित सरकार की निर्बचत वर्ष 1996-97 में जीडीपी के 1.7 प्रतिशत से तेजी से गिरकर वर्ष 2001-02 में 6.2 प्रतिशत हो गईं। कुल बचत दर वर्ष 1995-96 में 25.2 प्रतिशत के शीर्ष पर थीं, वर्ष 1988-99 में ये हाल के वर्षों में 21.5 प्रतिशत के सबसे निचले स्तर पर पहुंच गईं। इसी के अनुरूप, निवेश दर वर्ष 1995-96 में शीर्ष पर थी और वर्ष 1998-99 में हाल के वर्षों में 22.6 प्रतिशत के निम्नतम स्तर पर रही। नब्बे के दशक के मध्य में तीन वर्ष 7 प्लस विकास के लिए आवश्यक बचत के प्रकार तथा निवेश दरों के कुछ प्रमाण उपलब्ध कराते हैं। वर्ष 1994-95 से 1996-97 के तीन वर्षों में औसत निवेश दर लगभग 26 प्रतिशत तथा घरेलू

सारणी 4.1

विकास तथा मुद्रा स्फीति दरः प्रवृत्तियां तथा वास्तविक आंकड़े

(प्रतिशत)

वर्ष	उत्पादन में वास्तविक विकास*	उत्पादन में विकास प्रवृत्तियां	विकास प्रवृत्ति से विचलन	वास्तविक मुद्रा स्फीति दर**	मुद्रा स्फीति दर प्रवृत्ति	मुद्रा स्फीति दर प्रवृत्ति से विचलन
1990-91	5.57	5.83	-0.26	10.50	9.65	0.85
1991-92	1.30	5.90	-4.60	13.81	9.46	4.35
1992-93	5.12	5.98	-0.86	8.72	9.15	-0.43
1993-94	5.90	6.06	-0.16	9.59	8.75	0.84
1994-95	7.25	6.10	1.15	9.43	8.27	1.16
1995-96	7.34	6.08	1.26	9.03	7.75	1.28
1996-97	7.84	6.00	1.84	7.44	7.21	0.23
1997-98	4.79	5.85	-1.06	6.67	6.68	0.01
1998-99	6.51	5.66	0.85	7.94	6.17	1.77
1999-00	6.06	5.45	0.61	3.94	5.70	-1.76
2000-01	4.37	5.21	-0.84	3.49	5.30	-1.81
2001-02	5.78	4.98	0.80	3.88	4.98	-1.10
2002-03	3.98	4.74	-0.76	3.46	4.72	-1.26

स्रोतः (आधारभूत आंकड़े):राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी

*** उत्पादन उपादान लागत पर जीडीपी को दर्शाता है।**

**** मुद्रास्फीति उपदान लागत पर जीडीपी के अंतर्निहित कीमत अस्फीतिकारक को प्रदर्शित करता है।**

$ प्रवृति की परिगणना वर्ष 1950-51 से 2002-03 के आंकड़ों को कवर करते हुए हैड्रिक-प्रेस्कॉट फिल्टर का उपयोग करते हुए की गयी है।

बचत दर-लगभग 24.7 प्रतिशत थी। इसके विपरीत, वर्ष 2000-01 से 2002-03 के दौरान औसतन निवेश दर 23.6 प्रतिशत तथा औसत दर 23.8 प्रतिशत थी। नब्बे के दशक में सार्वजनिक निवेश में निरन्तर गिरावट देखी गयी। सार्वजनिक क्षेत्र में सकल घरेलु पूंजी निर्माण दर वर्ष 1985-1990 के दौरान जीडीपी के 10.1 प्रतिशत के औसत से गिरकर वर्ष 2002-03 में 5.7 प्रतिशत हो गयी। चूंकि निजी निवेश में नब्बे के दशक के मध्य तक वृद्धि हुई थी, लेकिन सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश में

सारणी 4.2

जीडीपी के प्रतिशत के रूप में चालू कीमतों पर सकल घरेलु बचत

(प्रतिशत)

वर्ष	घरेलू	निजी कॉरपोरेट क्षेत्र	निजी क्षेत्र (2+3)	सार्वजनिक क्षेत्र	जोड़ (4+5)
1	2	3	4	5	6
औसत (1985-86 से1989-90)	16.03	1.96	17.99	2.39	20.38
1990-91	19.33	2.67	22.00	1.10	23.10
1991-92	16.96	3.11	20.07	1.97	22.04
1992-93	17.51	2.67	20.18	1.59	21.77
1993-94	18.42	3.48	21.90	0.63	22.53
1994-95	19.68	3.48	23.16	1.66	24.82
1995-96	18.19	4.93	23.12	2.03	25.15
1996-97	17.05	4.47	21.52	1.67	23.19
1997-98	17.63	4.17	21.80	1.33	23.13
1998-99	18.77	3.74	22.51	-0.99	21.52
1999-00	20.88	4.35	25.23	-1.04	24.19
2000-01	21.93	4.12	26.05	-2.31	23.74
2001-02	22.74	3.46	26.20	-2.75	23.45
2002-03	22.65	3.41	26.06	-1.85	24.21

स्रोत (आधारभूत आंकड़े): राष्ट्रीय आय लेखे, सीएसओ

सारणी 4.3

जीडीपी के प्रतिशत के अनुसार चालू बाजार कीमतों पर सकल पूंजी निर्माण

(प्रतिशत)

वर्ष	सार्वजनिक क्षेत्र	निजी कॉरपोरेट	घरेलू	निजी क्षेत्र (3+4)	जोड़ (2+5)	भूल-चूक	समायोजित जोड़ (6+7)
1	2	3	4	5	6	7	8
औसत (1985-86 से 1989-90)	10.11	4.33	8.83	13.16	23.27	-0.56	22.71
1990-91	9.34	4.13	10.60	14.73	24.07	2.23	26.30
1991-92	8.82	5.66	7.45	13.11	21.93	0.62	22.55
1992-93	8.55	6.46	8.78	15.24	23.79	-0.17	23.62
1993-94	8.24	5.61	7.40	13.01	21.25	1.84	23.09
1994-95	8.71	6.91	7.76	14.67	23.38	2.62	26.00
1995-96	7.66	9.58	9.29	18.87	26.53	0.37	26.90
1996-97	7.03	8.05	6.69	14.74	21.77	2.71	24.48
1997-98	6.61	7.97	7.99	15.96	22.57	2.02	24.59
1998-99	6.58	6.39	8.41	14.80	21.38	1.20	22.58
1999-00	6.94	6.46	10.26	16.72	23.66	1.67	25.33
2000-01	6.29	5.06	11.27	16.33	22.62	1.73	24.35
2001-02	5.83	4.88	11.60	16.48	22.31	0.83	23.14
2002-03	5.68	4.80	12.34	17.14	22.82	0.45	23.27

स्रोतः (आधारभूत आंकड़े): राष्ट्रीय आय लेखा, सीएसओ

गिरावट देखी गयी। तथापि, वर्ष 1995-96 के बाद निजी कारपोरेट क्षेत्र में निवेश भी गिर गया।

4.17 चार मुख्य बातें हैं जिन्हें नब्बे के दशक के मध्य के विकास-बचत निवेश-प्रोफाइल की नए दशक के पहले तीन वर्षों से तुलना करते हुए रेखांकित किया गया है।

i. नब्बे के दशक के मध्य में, उपादान लागत पर जीडीपी की औसत वृद्धि 7.5 प्रतिशत वार्षिक थी जो वर्ष 2000-03 के दौरान 4.7 प्रतिशत के औसत तक गिर गयी;

ii. सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर इस अवधि के दौरान 1.8 प्रतिशत के औसत स्तर से नीचे गिरकर जीडीपी का -2.3 हो गयी जो 4.1 प्रतिशत अंक के बराबर है;

iii) सार्वजनिक क्षेत्र का निवेश 1.9 प्रतिशत अंक तक गिर कर जीडीपी के 7.8 प्रतिशत के औसत स्तर से समग्र निवेश दर 2.2 प्रतिशत अंक तक गिरकर 25.8 प्रतिशत से 23.6 प्रतिशत हो गयी। कारपोरेट निवेश वर्ष 1995-96 में जीडीपी के 9.8 प्रतिशत के उच्च स्तर से गिरकर वर्ष 2002-03 में 4.8 प्रतिशत हो गया;

iv) दो अवधियों के मध्य सकल घरेलू बचत की तुलना में सकल घरेलू निवेश की अधिकता चालू लेखा घाटे में निर्भरता की सीमा प्रदर्शित करती है जो 1.4 प्रतिशत अंक से गिरकर 0.2 प्रतिशत अंक हो गयी।

4.18 विकास दर को 7 प्रतिशत तक बढ़ाने और उसे अनवरत बनाए रखने हेतु 28 प्रतिशत की कुल निवेश दर की अपेक्षा इस अनुमान के साथ है कि वर्धित पूंजी उत्पादन अनुपात (आईसीओआर) 4 है। दसवीं योजना ने अपेक्षाकृत निम्न आईसीओआर का अनुमान लगाकर 8 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करने हेतु 28.4 प्रतिशत की औसत निवेश दर की परिकल्पना की है। कुल निवेश के ऐसे स्तरों की आवश्यकता जीडीपी से सम्बन्धित सार्वजनिक तथा निजी निवेश के स्तरों को बढ़ाने के लिए होगी। हमारे द्वारा सुझायी गई पुनर्सरचित योजना जिसका ब्यौरा बाद में इस अध्याय में दिया गया है, जीडीपी से सम्बन्धित सरकारी निवेश तथा बचत में स्पष्ट बढ़ोतरी को दर्शाती है।

साम्यिक विकास के मुद्दे

4.19. साम्यिक विकास के मुद्दे पर विचार करते समय, हम इसके प्रकटीकरणों की तीन बातों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। कई स्तरों पर अन्तर-राज्य विषमताएं और प्रति व्यक्ति जीएसडीपी विकास राजकोषीय क्षमता में विषमताएं प्रदर्शित करती है। प्रति व्यक्ति सरकारी व्ययों विशेष रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य तथा जलापूर्ति और स्वच्छता जैसे प्राथमिक क्षेत्रों में व्याप्त विषमताएं यह प्रदर्शित करती हैं कि कितनी मात्रा में निम्न राजकोषीय क्षमताएं सेवाओं के प्रावधान में सरकारों के राजकोषीय हस्तक्षेप में मदभेदों के रूप में परिणत होती हैं। मानव विकास सूचकांक में अन्तर राज्य पैटर्न की जांच करके हम कुछ संगत परिणामों में व्याप्त विषमताओं पर नजर डालते हैं और जो अन्य कारकों सहित राजकोषीय हस्तक्षेप से प्रभावित हो सकता है।

4.20. सारणी 4.4 वर्ष 1993-94 की कीमतों पर जीएसडीपी की विकास दरों की प्रवृत्ति दिखाती है। सामान्यतः अपेक्षाकृत उच्च आय वाले राज्य उच्च दरों के रूप में सामने आए हैं। अस्सी तथा नब्बे के दशकों में औसत विकास दरों के मध्य कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। पंजाब तथा हरियाणा के मामले में, विकास घटा है यद्यपि पंजाब के सम्बन्ध में वर्ष 1999-00 से 2001-02 की तुलना में औसत पर विचार करते हुए सर्वोच्च प्रति व्यक्ति जीएसडीपी दर्ज किया गया। सर्वाधिक गरीब राज्य जहां विकास दर अस्सी

सारणी 4.4

स्थिर मूल्यों पर जीएसडीपी की वृद्धि दर प्रवृत्ति (1993-94) राज्य श्रृंखलाएं#

	1980-81 से 1989-90	1990-91 से 2001-02		1980-81 से 1989-90	1990-91 से 2001-02
आंध्र प्रदेश	5.35	5.60	मध्य प्रदेश*	4.02	4.81
अरूणाचल प्रदेश	8.14	4.68	महाराष्ट्र	5.64	6.27
असम	3.50	2.53	मणिपुर	5.12	5.35
बिहार*	4.60	3.79	मेघालय	4.94	5.81
गोवा	4.79	8.40	उड़ीसा	5.01	4.21
गुजरात	5.05	7.20	पंजाब	5.44	4.66
हरियाणा	6.21	4.72	राजस्थान	6.01	5.85
हिमाचल प्रदेश	4.70	6.09	तमिलनाडु	5.18	6.26
जम्मू और कश्मीर**	2.80	4.89	त्रिपुरा	5.29	8.94
कर्नाटक	5.36	7.17	उत्तर प्रदेश*	4.80	3.84
केरल	3.16	5.51	पश्चिम बंगाल	4.70	6.93

स्रोतः (आधारभूत आंकड़े) : सीएसओ

*** इन राज्यों का विभाजन वर्ष 2000 में हुआ था। आंकड़े सामूहिक राज्यों से संबद्ध हैं।**

**** वर्ष 2000-01 तक।**

# राज्य की जीडीपी श्रृंखलाओं से संबंधित हैं।

के दशक की तुलना में नब्बे के दशक में गिरी है, असम, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान हैं।

4.21. सारणी 4.5 वर्ष 1993-94 से 2001-02 की तुलना में तुलनीय प्रति व्यक्ति जीएसडीपी में व्याप्त विषमता के सरसरी तौर पर संकेतकों को प्रदर्शित करती है। न्यूनतम जीएसडीपी प्रति व्यक्ति अनुपात (बिहार के संबंध में) और अधिकतम जीएसडीपी प्रति व्यक्ति अनुपात (जो गोवा को छोड़कर, विभिन्न वर्षों में या तो महाराष्ट्र अथवा पंजाब से सम्बद्ध है) वर्ष 1993-94 में 30.5 प्रतिशत से गिरकर वर्ष 1995-96 में 26.1 हो गया, उसके बाद अनुपात में वर्ष 1998-99 तक सुधार आया। यह पुनः गिरकर वर्ष 2001-02 में 26.5 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया। गुणांक परिवर्तन के भारित में भी वर्ष 1995-96 के बाद कुछ कमी हुई है और यह वर्ष 1999-2000 के बाद पुनः बढ़ा है। गिनी गुणांक जो सारणी 4.5 में दिया गया है, आय असमानता को यह मानकर प्रदर्शित करता है कि किसी राज्य के भीतर रहने वाले सभी लोग सम्बद्ध राज्य की औसत आय पर स्थित हैं। इसलिए यह अन्तर राजकीय असमानता को प्रदर्शित करता है न कि राज्य के भीतर की असमानता को (5)। गिनी गुणांक वर्ष 1996-97 को छोड़कर वर्ष 1999-00 तक आय असमानता में उत्तरोत्तर बढ़ोतरी को प्रदर्शित करता है। उसके बाद इसमें गिरावट देखी गयी। तथापि, यह ध्यान में रखना जरूरी है कि गिनी गुणांक का मूल्य 0.1917 और 0.2173 के बीच रहता है।

सारणी 4.5

प्रति व्यक्ति जीएसडीपी में विषमता

	न्यूनतम अनुपात से अधिकतम प्रति व्यक्ति जीएसडीपी* (प्रतिशत)	अन्तर गुणांक	गिनी गुणांक #
	भारित**		
1993-94	30.527	34.549	0.19170
1994-95	29.697	35.031	0.19262
1995-96	26.107	37.892	0.20719
1996-97	27.586	36.781	0.20708
1997-98	28.282	35.933	0.20853
1998-99	30.018	35.898	0.21062
1999-00	28.899	37.417	0.21732
2000-01	28.233	37.638	0.21034
2001-02	26.534	37.877	0.21016

स्रोतः आधारभूत आंकड़े : सीएसओ

* गोवा को छोड़कर

** जनसंख्या द्वारा भारित

14 राज्यों से सम्बद्ध अर्थात् असम तथा सामान्य श्रेणी के राज्य गोवा को छोड़करः गिनी गुणांक की गणना राज्य जीएसडीपी श्रृंखलाओं के सन्दर्भ में वर्ष 1993-94 के स्थिर मूल्यों पर की जाती है। वर्ष 2000-01 और 2001-02 के लिए विभाजित राज्यों को एक साथ मिला दिया गया है ताकि तुलनीयता को बनाए रखा जा सके।

सारणी 4.6

सामान्य, सामाजिक तथा आर्थिक सेवाओं से सम्बद्ध प्रति व्यक्ति व्यय

(रुपए)

राज्य	1998-99 से 2000-01			1998-99 से 2000-01		
	सा.	सामा.	आ.	शि.	स्वा.	ज.पू. तथा स्व.
बिहार	189.1	474.0	204.9	311.1	50.9	19.1
उड़ीसा	224.2	931.2	406.5	463.1	94.7	56.2
उत्तर प्रदेश	267.5	555.8	324.9	340.4	63.4	20.0
असम	334.4	929.9	369.3	615.2	92.2	59.2
मध्य प्रदेश	235.6	781.3	469.0	344.5	86.2	63.4
राजस्थान	265.4	1020.7	405.0	545.3	128.3	111.5
पश्चिम बंगाल	262.4	958.2	392.6	512.3	136.8	42.5
आन्ध्र प्रदेश	255.8	1004.1	634.3	411.7	118.2	57.7
केरल	318.2	1254.8	716.5	713.3	172.3	52.3
कर्नाटक	279.2	1083.9	755.8	558.3	135.7	60.3
तमिलनाडु	336.4	1240.9	685.3	651.5	154.4	38.3
गुजरात	274.6	1331.3	1285.7	664.4	154.3	39.0
हरियाणा	320.9	1145.4	902.4	587.6	122.1	102.1
महाराष्ट्र	624.4	1276.1	647.7	730.9	131.7	79.7
पंजाब	533.6	1220.5	733.9	716.3	221.1	55.0
अंतर गुणांक	36.88	25.24	45.95	26.30	34.93	45.11
न्यूनतम/अधिकतम	0.30	0.36	0.16	0.43	0.23	0.17
न्यूनतम/औसत	0.60	0.47	0.34	0.57	0.41	0.34

स्रोतः राज्य वित्त लेखे

मूल भावः सा.- ब्याज भुगतान तथा पेंशन को छोड़कर सामान्य सेवाएं

सामा.: सामाजिक सेवाएं आ.: आर्थिक सेवाएं शि.: शिक्षा स्वा.: स्वास्थ्य ज.पू. तथा स्व.: जलापूर्ति तथा स्वच्छता

एचटीएचः स्वास्थ्य, डब्लूएसएसः जलापूर्ति तथा स्वच्छता राज्यों को प्रति व्यक्ति जीएसडीपी के क्रम में व्यवस्थित किया गया है; बिहार, उ.प्र. तथा मध्य प्रदेश को अविभाजित राज्यों के रूप में लिया गया है।

4.22. विशेषकर सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में प्रति व्यक्ति सरकारी व्ययों का अन्तर-राज्य पैटर्न सार्वजनिक रूप से उपलब्ध करायी गयी सेवाओं के सम्बन्ध में मौजूदा विषमताओं को प्रदर्शित करता है। सारणी 4.6 वर्ष 1998-99 से 2000-01 की अवधि में सामान्यबद्ध सामाजिक और आर्थिक सेवाओं के सम्बन्ध में प्रति व्यक्ति औसत राज्य सरकार के व्ययों को प्रदर्शित करता है। सामान्य सेवाओं में ब्याज भुगतान, पेंशन और लाटरियों को शामिल नहीं किया गया है। यहां गोवा को छोड़कर बड़े राज्यों को लेकिन असम को शामिल करते हुए सामान्य श्रेणी के राज्यों पर ध्यान केन्द्रित करने वाले राज्यों के रूप में देखा जा रहा है। सामाजिक क्षेत्र के व्ययों के अन्तर्गत, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा जलापूर्ति और स्वच्छता पर किए जाने वाले प्रति व्यक्ति व्ययों के रूप में प्रदर्शित किया गया है। राज्यों को प्रति व्यक्ति जीएसडीपी के आरोही क्रम में व्यवस्थित किया गया है। सामान्य पैटर्न यह है कि निम्न प्रति व्यक्ति जीएसडीपी वाले राज्यों का निम्न प्रति व्यक्ति व्यय भी है। तथापि, कई अपवाद हैं। न्यूनतम से अधिकतम व्यय का अनुपात और न्यूनतम से औसत व्यय यह दर्शाते हैं कि सामान्य श्रेणी के राज्यों के मामले में, न्यूनतम व्यय अधिकतम व्यय का केवल 30 प्रतिशत है जिसमें गोवा को शामिल नहीं किया है और यह औसत व्यय का 60 प्रतिशत है। सामाजिक सेवाओं के मामले में, न्यूनतम प्रति व्यक्ति व्यय अधिकतम का 36 प्रतिशत तथा औसत का 47 प्रतिशत है। आर्थिक सेवाओं से सम्बन्धित तद्नुरूप सम्बन्ध 16 प्रतिशत तथा 34 प्रतिशत है। शिक्षा के मामले में, न्यूनतम से औसत अनुपात 57 प्रतिशत है। तद्नुरूप आंकड़े स्वास्थ्य तथा जलापूर्ति और स्वच्छता के सम्बन्ध में 41 प्रतिशत तथा 34 प्रतिशत हैं। ये आंकड़े आयोजना-भिन्न तथा आयोजना राजस्व व्यय दोनों को कवर करते हैं।

4.23. योजना आयोग मानव विकास (एचडीआई) के राज्यवार सूचकांक के अनुमान तैयार करता है। यह वर्ष 1981 तथा 1991 के लिए उपलब्ध हैं। दिल्ली स्थित यूएनडीपी कार्यालय ने आयोग के लाभार्थ वर्ष 2001 के मानव विकास सूचकांक (6) तैयार किए हैं। इन अनुमानों के अनुसार, बिहार रैंक में सबसे नीचे है उसके बाद उत्तर प्रदेश, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश का स्थान आता है। जैसा कि आशा थी, प्रति व्यक्ति जीएसडीपी तथा एचडीआई के बीच स्पष्ट सकारात्मक सम्बन्ध है। इसके साथ ही, ऐसे राज्यों का जिन्हें स्वास्थ्य तथा शिक्षा पर प्रति व्यक्ति बजटीय व्यय के सम्बन्ध में अधिक आवंटन प्रदान किया गया है, रैंक प्रति व्यक्ति जीएसडीपी के रैंकिंग में उनकी सापेक्ष स्थिति की अपेक्षा ऊंचा है। ऐसा ही विशेष श्रेणी वाले राज्यों के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। आधारभूत सूचकांक की सापेक्ष रैंकिंग के आधार पर (7), राज्यों को भी पांच श्रेणियों में समूहीकृत किया गया है जिसे सारणी 4.7 में दिखाया गया है। जहां एचडीआई सामाजिक सेवाओं तक पहुंच प्रदर्शित करता है, आधारभूत सूचकांक भौतिक आधारभूत ढांचे तक पहुंच को दर्शाता है। इसके साथ ही, ये विषमताओं के दो विभिन्न आयामों को भी शामिल करते हैं। यह उल्लेखनीय है कि जहां विशेष श्रेणी वाले राज्य एचडीआई के सन्दर्भ में बेहतर स्थिति में हैं, आधारभूत ढांचे के सम्बन्ध में पहुंच की उनकी स्थिति एक मुख्य बाधा है। बिहार तथा राजस्थान जैसे निम्न आय वाले राज्यों के सम्बन्ध में, एचडीआई तथा आधारभूत ढांचा सूचकांक दोनों ही बाधा को प्रदर्शित करते हैं।

सारणी 4.7

चुनिंदा संकेतकों के अनुसार समूहीकृत राज्य

मानव विकास सूचकांक	आधारभूत सूचकांक
उच्च गोवा, केरल, महाराष्ट्र, मिजोरम	**उच्च** गोवा, महाराष्ट्र, पंजाब
उच्च मध्यम गुजरात, मणिपुर, नागालैंड पंजाब, सिक्किम तमिलनाडु	**उच्च मध्यम** गुजरात, हरियाणा केरल, तमिलनाडु
मध्य आंध्र प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मेघालय, कर्नाटक, त्रिपुरा, पश्चिम बंगाल, उतरांचल	**मध्य** आंध्र प्रदेश, कर्नाटक
निम्न मध्यम असम, छत्तीसगढ़, जम्मू और कश्मीर, झारखंड, राजस्थान	**निम्न मध्यम** हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, उ.प्र., उतरांचल, पश्चिम बंगाल
निम्न बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश	**निम्न** अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, झारखंड, मिजोरम, नागालैंड, असम, छत्तीसगढ़, सिक्किम, त्रिपुरा, जम्मू और कश्मीर, बिहार, राजस्थान

स्रोतः एचडीआई से सम्बन्धित यूएनडीपी तथा आधारभूत ढांचा सूचकांक सम्बन्धी आईडीएफसी

4.24 आय स्तरों तथा इसका विकास कई कारकों पर निर्भर करता है जिसमें राज्यों के अपने स्तर से किए गए प्रयास तथा नीतियां, निजी पूंजी, घरेलू तथा विदेशी पूंजी का अन्तर-राज्य वितरण, केन्द्रीय निवेश तथा चालू व्ययों के लाभ का अन्तर-राज्य पैटर्न शामिल है। कुछ मामलों में, बढ़ता उदारीकरण तथा बाजारोन्मुख प्रवृत्ति की वजह से आंशिक रूप से नीति अनुकूल तथा ढांचागत सुविधाओं की उपलब्धता के कारण अपेक्षाकृत अधिक विकसित राज्यों की ओर निधियों सापेक्ष प्रवाह बढ़ने की सम्भावना है। काफी अपेक्षित सुधार आयोजना निधियों के वितरण तथा आंवटन से आने चाहिए। हमारी ओर से, अन्तरणों की स्कीम में सुपुर्दगी फार्मूले के उपयुक्त मानदंड को तैयार करने के अलावा, हमने अनुदानों की सिफारिश भी की है जो शिक्षा तथा स्वास्थ्य से सम्बन्धित व्ययों के सरकारी सिद्धान्तों के अनुप्रयोग पर कुछ सीमा तक आधारित हैं। ये लाभ मुख्यतः उन राज्यों को मिलेंगे जिनका एचडीआई में सापेक्षतया निम्न रैंक हैं।

सम्मिलित सरकारी वित्तों की प्रवृत्तियां

(क) राजकोषीय असंतुलन

4.25 हमने वर्ष 1987-88 से 2001-02 की 15-वर्षीय समयावधि की सम्मिलित सरकारी वित्तों की मुख्य प्रवृत्तियों की जांच की है। अस्सी के दशक के अन्त में इस आलोच्य अवधि में कर-जीडीपी अनुपात के शीर्ष स्तरों में तथा साथ ही राजकोषीय घाटे के विगत के शीर्ष स्तरों में हुए परिवर्तनों को रेखांकित किया गया है। राजकोषीय अंसतुलन में जिसे राजस्व, राजकोषीय तथा प्राथमिक घाटे द्वारा दिखाया गया है और जो अस्सी के दशक के अन्त में उच्च स्तरों पर था, नब्बे के दशक के मध्य में सुधार दिखायी दिया है लेकिन उसके बाद इसमें गिरावट देखी गयी। जैसाकि अनुबंध 4.1 तथा चार्ट 4.2 में दिखाया गया है, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में राजस्व तथा राजकोषीय घाटा उसके अस्सी के दशक के अन्त में मौजूद स्तरों की अपेक्षा वर्ष 1999-2002 में औसत तौर पर अधिक था। राजस्व घाटा निरन्तर सर्वाधिक गिरावट को प्रदर्शित करता है जो वर्ष 1987-1990 में जीडीपी के 3 प्रतिशत के औसत से बढ़कर 1999-2002 में दोगुने से अधिक 6.7 प्रतिशत हो गया। यह वर्ष 1995-96 में 3.2 प्रतिशत तक गिर गया उसके बाद इसमें लगातार बढ़ोतरी हुई।

4.26 राजकोषीय घाटे के मामले में, 0.7 प्रतिशत अंक की गिरावट हुई है। अस्सी के दशक के अन्त में, राजकोषीय घाटे का औसत स्तर जीडीपी का 8.8 प्रतिशत था जो वर्ष 1999-2002 में बढ़कर 9.5 प्रतिशत हो गया। तथापि, नब्बे के दशक के मध्य में सुधार दिखाई दिया। वर्ष 1996-97 में राजकोषीय धाटा जीडीपी के 6.3 प्रतिशत तक गिर गया। प्राथमिक घाटा अस्सी के दशक के अन्त में जीडीपी के 4.9 प्रतिशत के औसत पर था। यह वर्ष 1996-97 में 1.1 प्रतिशत तक गिर गया जिसके बाद इसमें गिरावट देखी गयी लेकिन वर्ष 1987-1990 की तुलना में यह 1999-2002 म्में औसत तौर पर कम था। इस प्रकार, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में प्राथमिक घाटा वर्ष 1987-1990 के औसत स्तर की तुलना में 1.2 प्रतिशत अंक नीचे था। राजकोषीय घाटे से सम्बद्ध राजस्व का अनुपात सरकारी उधारों के अनुपात को रेखांकित करते हुए जो परिसम्पत्तियों के निर्माण में सहायक नहीं है और जो भविष्य में उधार सेवा के रूप में लाभ प्रदान कर सकता है, राजकोषीय घाटे की "गुणवत्ता" को इंगित करता है। यह अनुपात अस्सी के दशक के अन्त में लगभग 34 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 1999-2002 के दौरान औसतन 68 प्रतिशत तक बढ़ गया। यह सरकार के वित्तों के परिप्रेक्ष्य में एक मुख्य कमी है जो यह संकेत करती है कि उधार का उत्तरोत्तर भाग उपभोग पर व्यय किया जा रहा है। नब्बे के दशक के मध्य के बाद राजकोषीय गिरावट के लिए उत्तरदायी मुख्य कारणों में पांचवें वेतन आयोग की सिफारिशों के फलस्वरूप वेतन तथा पेंशन में संशोधन, केन्द्रीय अप्रत्यक्ष करों के उछाल में गिरावट, नब्बे के दशक के अन्त में उच्च नामिनल ब्याज दरें, जो बाद के वर्षों में मुद्रास्फीति की दर में गिरावट से संयोजित हुईं, जिम्मेदार हैं। तथापि, नब्बे के दशक के अन्त में नामिकल ब्याज दरों में आयी गिरावट का व्यय पर कुछ लाभप्रद प्रभाव दिखाई दिया।

(ख) सम्मिलित राजस्व और व्यय की प्रवृत्तियां

4.27 सारणी 4.8 सभी अन्तः सरकारी प्रवाहों को घटाने के पश्चात् केन्द्र और राज्य सरकारों के सम्मिलित राजस्व और व्यय के कुछ मुख्य शीर्षों में संरचनात्मक परिवर्तनों को दर्शाती है। सकल घरेलू उत्पाद के प्रति कुल कर का अनुपात अस्सी के दशक के अन्त में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 16 प्रतिशत के स्तर से गिर कर लगभग 14.4 प्रतिशत हो गया अर्थात् इसमें 1.6 प्रतिशत अंक की गिरावट हुई। कुल राजस्व प्राप्तियों के अनुपात में भी इसी क्रम से गिरावट हुई जो यह दर्शाती है कि

चार्ट 4.2

जीडीपी के प्रतिशत के रूप में राजस्व, राजकोषीय तथा प्राथमिक घाटा

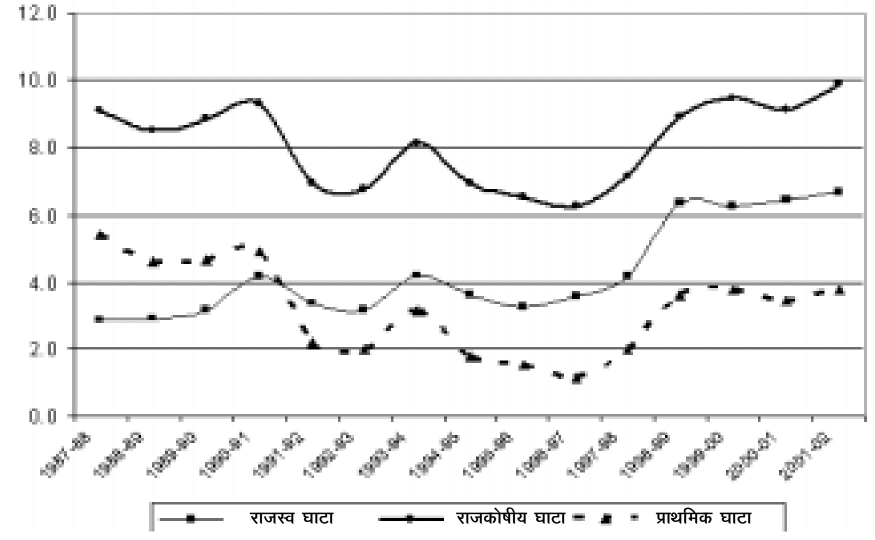

सारणी 4.8

केन्द्र और राज्य सरकारों के सम्मिलित वित्तों में संरचनात्मक परिवर्तन

(बाजार मूल्यों पर स.घ.उ. के प्रति प्रतिशत)

	कर राजस्व	ब्याज भुगतान	पूंजी व्यय	राजस्व प्राप्तियां	राजस्व व्यय	राजस्व प्राप्तियों के प्रति ब्याज भुगतान (प्रतिशत)
औसत (1987-88 से 1989-90 तक)[I]	16.0	3.9	6.1	18.7	21.7	21.0
औसत (1999-00 से 2001-02 तक)[II]	14.4	5.8	3.3	17.1	23.6	34.0
(II-I)	**-1.6**	**1.9**	**-2.8**	**-1.6**	**1.8**	**13.0**

स्रोत (आधारभूत आंकड़े) : भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी

सकल घरेलू उत्पाद के सापेक्ष कर-भिन्न राजस्व के अंशदान में कोई प्रत्यक्ष परिवर्तन नहीं हुआ। राजस्व व्यय के मामले में, औसत राजस्व व्यय सकल घरेलू उत्पाद के 21.7 प्रतिशत से बढ़ कर 23.6 प्रतिशत अंक हो गया जो 1.8 प्रतिशत अंक की वृद्धि को दर्शाता है। ऐसा मुख्यतः सकल घरेलू उत्पाद के सापेक्षतया ब्याज भुगतानों में वृद्धि होने के कारण हुआ जो 3.9 प्रतिशत से बढ़कर 5.8 प्रतिशत हो गए। वर्ष 1999-2002 के दौरान पूंजी व्यय में 2.8 प्रतिशत अंक की गिरावट हुई जो 6.1 प्रतिशत से घट कर 3.3 प्रतिशत हो गया।

4.28 कर राजस्वों की मात्रा और संघटन का सरकारी वित्तों की संरचना में बहुत महत्व है। वर्ष 1950-51 से सकल घरेलू उत्पाद के प्रति कर अनुपात में वृद्धि की जांच यह दर्शाती है कि वर्ष 1950-51 में सकल घरेलू उत्पाद के 6.3 प्रतिशत के स्तर से शुरु करके कर-सकल घरेलू उत्पाद अनुपात निरन्तर बढ़ते हुए वर्ष 1987-88 में 16.1 प्रतिशत हो गया। इसमें अधिकांश वृद्धि अप्रत्यक्ष करों में वृद्धि होने के कारण हुई। वर्ष 1950-51 में, अप्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद का 4 प्रतिशत थे जबकि प्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद 2.4 प्रतिशत थे। तब से अप्रत्यक्ष कर बढ़ कर वर्ष 1987-88 में 14 प्रतिशत के शीर्ष स्तर पर पहुंच गए जबकि प्रत्यक्ष कर वर्ष 1994-95 तक 3 प्रतिशत से भी कम बने रहे। कर सुधारों के परिणामस्वरूप, सकल घरेलू उत्पाद के सापेक्षतया अप्रत्यक्ष करों में गिरावट होनी शुरु हो गई जबकि प्रत्यक्ष करों का अनुपात बढ़ने लगा। लेकिन प्रत्यक्ष करों में वृद्धि की मात्रा अप्रत्यक्ष करों में गिरावट की अपेक्षा कम थी। परिणामस्वरूप, सकल घरेलू उत्पाद के प्रति समग्र कर अनुपात वर्ष 1987-88 के अपने शीर्ष स्तर से गिर कर वर्ष 2001-02 में 14.4 प्रतिशत हो गया। सारणी 4.9 केन्द्र और राज्य सरकारों के संबंध में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों में दशक-वार वृद्धि को दर्शाती है। केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर राजस्व में वृद्धि केवल सत्तर के दशक को छोड़कर, अस्सी के दशक तक 1 से कम रही। नब्बे के दशक में प्रत्यक्ष कर में हुए सुधारों जिनमें कराधार बढ़ाना और कर दरों में कमी

सारणी 4.9

केन्द्रीय और राज्य कर राजस्वों में दशक-वार वृद्धि

	1950-51 से 1959-60	1960-61 से 1969-70	1970-71 से 1979-80	1980-81 से 1989-90	1991-92 से 2001-02	1950-51 से 2001-02
केन्द्रीय करः सकल राजस्व						
प्रत्यक्ष	0.94	0.96	1.18	0.94	1.30	1.09
अप्रत्यक्ष	1.65	1.24	1.30	1.20	0.72	1.16
जोड़	**1.38**	**1.15**	**1.27**	**1.14**	**0.89**	**1.14**
राज्य के अपने कर राजस्व						
प्रत्यक्ष	-8.43	3.61	-6.32	-8.20	-4.34	-2.46
अप्रत्यक्ष	1.41	1.37	1.37	1.11	1.02	1.23
जोड़	**1.39**	**1.17**	**1.35**	**1.11**	**1.02**	**1.17**
कुल कर राजस्व						
प्रत्यक्ष	1.05	0.79	1.16	0.96	1.26	1.03
अप्रत्यक्ष	1.55	1.29	1.33	1.16	0.86	1.19
जोड़	**1.38**	**1.16**	**1.30**	**1.13**	**0.93**	**1.15**

स्रोत (आधारभूत आंकड़े): भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी और राष्ट्रीय आय लेखे

राज्यों के मामले में कुल कर राजस्वों में प्रत्यक्ष करों का हिस्सा नगण्य रहा है। ऋणात्मक वृद्धि का अर्थ सम्पूर्ण रूप में गिरावट है।

करना शामिल था।, के कारम ही यह वृद्धि वर्ष 1990-91 से लेकर 2001-02 तक की अवधि में 1.3 के स्तर पर पहुंच गई। केन्द्रीय अप्रत्यक्ष कर विपरीत दिशा में रहे। अस्सी के दशक के अन्त तक 1 से भी अधिक की वृद्धि बनाए रखने के बाद जीडीपी के संबंध में यह नब्बे के दशक में काफी घट कर 1 से भी कम हो गई। ऐसा दोनों केन्द्रीय उत्पाद शुल्कों की कर दरों में गिरावट होने और सीमा शुल्कों के मामले में तो और भी तेजी से होने, के कारण हुआ। केन्द्रीय अप्रत्यक्ष करों की भारी मात्रा को देखते हुए समग्र जीडीपी अनुपात में गिरावट हुई। नब्बे के दशक में राज्यों के अप्रत्यक्ष करों की वृद्धि भी कम हो गई हालांकि केन्द्रीय अप्रत्यक्ष करों की तुलना में यह ऊंची बनी रही। राज्य के अप्रत्यक्ष करों में दशक-वार वृद्धि अस्सी और नब्बे के दशकों में उल्लेखनीय गिरावट को दर्शाती है हालांकि ये 1 से अधिक बनी रही।

ग. ऋण में वृद्धिः केन्द्र और राज्य

4.29 वर्ष 2002-03 के अन्त में केन्द्र और राज्य सरकारों का सम्मिलित ऋण-स.घ.उ. (जी.डी.पी) अनुपात कुछ अर्हताओं के अधीन स.घ.उ. का लगभग 76 प्रतिशत था। प्रथमतः सरकारी बजट दस्तावेज़ों में परम्परागत विनिमय दरों अर्थात् उन वर्षों की विनिमय दरें जिनमें ऋण को खर्च किया गया है पर यथा मूल्यांकित केन्द्र के विदेशी ऋण का ब्यौरा दिया गया है। चूंकि कई वर्षों से विनिमय दरों में गिरावट हुई है इसलिए यदि विदेशी ऋण का मूल्यांकन वर्तमान विनिमय दरों पर किया जाता है तो इससे अन्तर आता है। यह अन्तर 1991-92 में करीब 11 प्रतिशत था। तथापि, कुछ वर्षों से यह अन्तर निरन्तर कम होता आ रहा है। वर्ष 2002-03 में, यदि ऋण का मूल्यांकन वर्तमान विनिमय दरों पर किया जाता है तो ऋण-स.घ.उ. अनुपात में लगभग 5.6 प्रतिशत जोड़ने की जरूरत होगी। इससे वर्ष 2002-03 में सम्मिलित ऋण-स.घ.उ. अनुपात 81.6 प्रतिशत हो जाएगा। दूसरी अर्हता यह है कि राज्य सरकारों की देनदारियों का हिसाब लगाते समय प्रारक्षित निधियों की कतिपय देनदारियों और जमाराशियों को शामिल नहीं किया गया है। वर्ष 2002-03 में समग्र ऋण-स.घ.उ. को 85 प्रतिशत पर लाने के लिए स.घ.उ. के लगभग 3.4 प्रतिशत बिन्दु को इसके खाते में जोड़ने की जरूरत होगी। इन आंकड़ों में आकस्मिक देनदारियों को शामिल नहीं किया गया है जो स.घ.उ. के 11 प्रतिशत से अधिक हैं।

4.30 हालांकि हम इन अर्हताओं के बिना ऋण के अधिक परम्परागत बजटीय आंकड़ों पर केन्द्रित रहते हैं यह आश्चर्य की बात है कि यह वर्ष 1996-97 से जब ऋण-स.घ.उ. अनुपात 56.3 प्रतिशत था जो ईएफसी की निर्धारित दर से मामूली ही अधिक था, कैसे बढ़ गया। वर्ष 1995-96 से वर्ष 2002-03 की अवधि के दौरान सम्मिलित ऋण-स.घ.उ. अनुपात 56.3 प्रतिशत से बढ़ कर वर्ष 2002-03 में 76 प्रतिशत हो गया अर्थात् 6 वर्षों की अवधि में 20 प्रतिशत अंक से थोड़ा कम की वृद्धि हुई। इतनी कम अवधि में ऋण-स.घ.उ. अनुपात में यह एक अप्रत्याशित वृद्धि है। इस अवधि के दौरान ऋण-स.घ.उ. अनुपात में वृद्धि के स्रोत पर ध्यान देना संचित प्राथमिक घाटों और वृद्धि तथा ब्याज दरों में अन्तर (8) के योगदान के रूप में वृद्धि को वियोजित करना है। निरन्तर तीन वर्षों अर्थात् 2000-01, 2001-02 और 2002-03 में नामिनल वृद्धि दर गिर कर प्रभावी ब्याज दर से कम हो गई। इन वर्षों में, प्राथमिक घाटों के असर को खपाने के बजाय वृद्धि-ब्याज अन्तर ने जो कि नकारात्मक था, ऋण स.घ.उ. अनुपात को बढ़ाते हुए प्रतिकूल भूमिका निभाई। इसलिए वर्ष 1996-97 से 2002-03 की अवधि में ब्याज से अधिक वृद्धि की अधिकता संचित प्राथमिक घाटों के किसी भी तरह के असर को खपा नहीं सकी क्योंकि पहले तीन वर्षों के लाभ बाद के तीन वर्षों के प्रतिकूल प्रभाव के कारण व्यर्थ हो गए। इसलिए समग्र वृद्धि प्राथमिक घाटों के संचयन के कारण हुई जिन्हें ब्याज दरों से अधिक वृद्धि की अधिकता द्वारा खपाया नहीं जा सका।

4.31 ऋण-स.घ.उ. अनुपात के उच्च स्तरों के परिणामस्वरूप राजस्व प्राप्तियों के सापेक्ष में ब्याज भुगतान अधिक हुए। चूंकि ब्याज भुगतान वचनबद्ध खर्च है इसलिए जब स.घ.उ. के प्रति राजस्व प्राप्तियों का अनुपात धीमा रहता है तो राजस्व घाटों में अवश्य ही वृद्धि होगी। इससे एक ओर तो बचत दर कम होती जाती है और दूसरी ओर प्राथमिक खर्च को बनाए रखने के लिए राजकोषीय घाटा बढ़ता जाता है। अन्ततः इन परिवर्तनों, राजकोषीय घाटों, ऋण ब्याज भुगतानों और राजस्व घाटों में उत्तरोत्तर वृद्धि करने और पुनः उच्चतर राजकोषीय घाटों पर वापस आने की क्षमता है। इससे ऋण की वहनीयता का सवाल पैदा होता है।

राजकोषीय घाटा और ऋण : वहनीयता का सवाल

4.32 सरकारी ऋण उन उधारों के संचयन का परिणाम है जिनका उपयोग राजकोषीय घाटों के वित्त प्रबंध के लिए किया जाता है। यदि राजस्व लेखा संतुलित रहता है तो सम्पूर्ण राजकोषीय घाटा पूंजीगत व्यय पर खर्च किया जाएगा। ऐसे निवेश से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त हो सकते हैं। प्रत्यक्ष लाभ ब्याज प्राप्तियों अथवा लाभांशों के रूप में होते हैं। अप्रत्यक्ष लाभ तब प्राप्त होते हैं जब सरकारी निवेश वृद्धि को बढ़ावा देता है जिसके परिणामस्वरूप राजस्व प्राप्तियां अपेक्षाकृत बढ़ जाती है। ऋण उस समय समस्या बन जाता है जब राजस्व प्राप्तियों में वृद्धि चाहे प्रत्यक्ष हो अथवा अप्रत्यक्ष, ऋण शोधन के लिए अपेक्षित ब्याज की देनदारियों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती। जब बड़ी मात्रा में ब्याज भुगतान राजस्व प्राप्तियों की वृद्धि में शामिल नहीं किए जाते तो इससे राजस्व घाटा बढ़ता है और राजस्व घाटे का वह हिस्सा जिसे राजस्व व्यय के लिए उपयोग किया जाता है उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है और बढ़े हुए व्यय के साथ जुड़ी राजस्व वृद्धि कम रह जाती है। अन्ततः ऋण अवहनीय बन जाता है।

4.33 हालांकि अर्थशास्त्रियों के विचारों में भिन्नता है फिर भी उन परिस्थितियों पर जिनके अधीन ऋण और इसकी वृद्धि अर्थात् राजकोषीय घाटा, अवहनीय बन जाते हैं, संगत प्रसंग में विस्तार से चर्चा की गई है। तीन मुख्य सैद्धान्तिक दृष्टिकोण हैं, अर्थात् नव-शास्त्रीय, रिकार्डियन तुल्यता और कीनीशियन। परिस्थितियों और सम्बद्ध परिप्रेक्ष्यों पर निर्भर करते हुए राजकोषीय घाटा खराब, तटस्थ अथवा अच्छा हो सकता है। नव-शास्त्रीय विचार धारा यह मानती है कि राजकोषीय घाटे निवेश और वृद्धि के लिए हानिकारक हैं जबकि कीनीशियन प्रतिमान में, यह एक मुख्य नीतिगत

परिप्रेक्ष्य का निर्माण करती है। रिकार्डियन तुल्यता सिद्धान्त में राजकोषीय घाटों का कोई खास महत्व नहीं है सिवाए इसके कि यह व्यय अथवा राजस्व संबंधी आघातों के प्रति समायोजन के मार्ग को सहज बनाते हैं। जबकि नव-शास्त्रीय और रिकार्डियन विचारधारा दीर्घावाधि प्रभावों पर केन्द्रित है कीनीशियन विचारधारा अल्पावधिक प्रभावों पर बल देती है।

4.34 नव-शास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में राजकोषीय घाटों का वृद्धि पर तभी हानिकारक प्रभाव पड़ता है यदि सरकार की बचत में कमी को जो राजस्व घाटे के समतुल्य है [8] निजी बचत में वृद्धि द्वारा पूर्णतया प्रतिसंतुलित नहीं किया जाता। जब बचत दर में निवल गिरावट होती है तो उस समय समग्र बचतों पर बुरा प्रभाव पड़ने के अलावा ब्याज दरों पर भी दबाव पड़ता है, जिससे निजी निवेश कम हो जाता है और इसलिए वृद्धि पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। नव-शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों की यह मान्यता है कि बाजार को मुक्त बनाया जाता है ताकि संसाधनों का पूर्णतः उपयोग किया जा सके। कीनिशियन विचारधारा में यह तर्क दिया जाता है, विशेषतया संसाधनों को प्रयोग में न लिए जाने की स्थिति में, उधारों द्वारा वित्तपोषित स्वायत्त सरकारी व्यय में वृद्धि, चाहे वह निवेश के रूप में, हो या उपभोग के रूप में, वृद्धिकारी प्रक्रिया के माध्यम से बढ़ोत्तरी का परिणाम होगी। परम्परागत कीनिशियन ढांचा सरकारी उपभोग अथवा निवेश संबंधी व्यय के बीच राजकोषीय घाटे के वैकल्पिक प्रयोगों के बीच अन्तर नहीं करता और न ही यह मौद्रिकीकरण अथवा बाह्य अथवा आन्तरिक उधारों के माध्यम से राजकोषीय घाटे का वित्त प्रबंध करने के वैकल्पिक स्रोतों के बीच अन्तर नहीं करता। हालांकि कीन्स द्वारा किए गए विश्लेषण में बजट संबंधी कोई प्रत्यक्ष बाधा नहीं है लेकिन बाद के घटनाक्रम जिनमें बजट संबंधी बाधाएं सम्मिलित हैं, दर्शाते हैं कि परिणामस्वरूप कुछ कीनिशियन निष्कर्ष शिथिल पड़ गए हैं। रिकार्डियन तुल्य सिद्धान्त में राजकोषीय घाटों को वृद्धि पर उनके प्रभाव के लिए तटस्थ माना जाता है। घाटों द्वारा बजट का वित्त प्रबंध करने का अर्थ है करों को स्थगित करना। किसी भी वर्तमान अवधि में घाटा भावी कराधान के वर्तमान मूल्य के बिल्कुल समान है जिसकी आवश्यकता घाटे के परिणामस्वरूप बढ़े हुए ऋण का भुगतान करने के लिए है। चूंकि सरकारी खर्च का भुगतान होना चाहिए चाहे वह अभी किया जाए अथवा बाद में, इसलिए खर्च का वर्तमान मूल्य कर और कर-भिन्न राजस्वों के वर्तमान मूल्य के बराबर होना चाहिए। यदि घरेलू खर्च संबंधी निर्णय उनकी ऐसी आमदनियों के वर्तमान मूल्य पर आधारित है जिनमें उनकी कर संबंधी भावी देनराशियों के वर्तमान मूल्य को ध्यान में रखा जाता है तो राजकोषीय घाटों का समग्र मांग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

4.35 इन वैकल्पिक विश्लेषक ढांचों की प्रासंगिकता और व्यवहार्यता किसी एक अर्थव्यवस्था की प्रायोगिक विशेषताओं और प्रारम्भिक स्थितियों पर निर्भर करती है। यह विशेष रूप से घरेलू क्षेत्र की बचत प्रवृत्ति पर निर्भर करती है। यदि उपभोक्ता दूरदर्शी नहीं है और देनदारी से बाधित हैं तो कुल उपभोग प्रयोज्य आमदनियों में परिवर्तन के प्रति बहुत संवेदी हो जाता है और यहां कीनिशियन का सिद्धान्त अधिक व्यवहार्य है। यदि व्यक्ति विवेक सम्मत है, पूरी तरह सजग हैं और परार्थवादी प्रवृत्ति से प्रेरित हैं तो वहां रिकार्डियन तुल्यता सिद्धान्त की कुछ मान्यता हो सकती है। सामान्यतः यह तर्क दिया गया है कि अल्पावधिक मांग प्रबंध के लिए कीनिशियन विचारधाराएं लागू होती हैं और दीर्घावधिक वृद्धि के लिए नव शास्त्रीय विचारधारा को प्रासंगिक माना जाना चाहिए। इन वैकल्पिक परिप्रेक्ष्यों में इतना गहरा अन्तर इस बात से आता है कि निजी क्षेत्र की बचत किसी एक निश्चित क्रम में राजकोषीय घाटे से कैसे प्रभावित होती है। यदि राजकोषीय घाटे अधिकांशतः राजस्व घाटों के वित्त प्रबंध के कारण होते हैं तो सरकारी बचत में गिरावट आएगी। कुछ हद तक इस गिरावट को निजी बचतों में वृद्धि द्वारा प्रतिसंतुलित किया जा सकता है क्योंकि राजकोषीय घाटे में वृद्धि होने से सरकारी बाण्डों की धारिता के रूप में उनके धन में वृद्धि होती है। बाद वाला प्रभाव प्रायः पहले वाले प्रभाव की अपेक्षा कम होता है [10] और इससे समग्र बचत दर में गिरावट आती है।

4.36 बचत-निवेश के रूप में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के निष्पादन की समीक्षा स्वीकार्य राजकोषीय घाटे के स्तरों के निर्धारण हेतु एक दृष्टिकोण प्रदान करती है। भारत में एक घरेलू क्षेत्र ही ऐसा क्षेत्र है जिसमें अधिक बचतें होती है जिन्हें निजी कार्पोरेट और सरकारी क्षेत्र द्वारा खपाया जाता है। ये अधिक बचतें उनकी वित्तीय रूप में बचते हैं। सारणी 4.10 में घरेलू क्षेत्र की अधिक बचत का परिदृश्य दिया गया है जो अन्य क्षेत्रों में उपयोग किए जाने हेतु उपलब्ध है। घरेलू क्षेत्र की वित्तीय बचतें वर्ष 1993-94 से मोटे तौर पर एक ही क्रम में रहीं जो थोड़े बहुत उतार-चढ़ाव के साथ स.घ.उ. के 10 से 11 प्रतिशत की रेंज में थी। वर्ष 1995-96 से चल रही प्रवृत्ति के साथ तुलना करते हुए यह पता चलता है कि सरकारी क्षेत्र घरेलू क्षेत्र की वित्तीय बचतों के एक बड़े भाग को खपाता आ रहा है। इस आधिक्य के लिए निजी कार्पोरेट क्षेत्र की मांग वर्ष 1995-96 में स.घ.उ. के 4.65 प्रतिशत से घट कर वर्ष 2002-03 में 1.4 प्रतिशत रह गई है। इसी कारण नब्बे के दशक के अन्त में ब्याज दरों पर कोई दबाव नहीं था। एक बार निजी क्षेत्र के मांग बढ़ जाने से वृद्धि में तेजी आने का दृश्य तभी सामने आएगा यदि सरकार अपने राजस्व घाटे को कम कर सकने में समर्थ हो जाती है तभी ब्याज दरें भी कम बनी रह सकेंगी। इसके अलावा, यदि सरकार अपने राजस्व घाटे को समाप्त करते हुए अपनी बचतों और पूंजीगत व्यय को बढ़ा सकती है तो निजी निवेशों की मांग पुनः सुदृढ़ हो जाएगी। अध्ययनों से पता चलता है कि आधारढांचे में सरकारी निवेश करने से निजी निवेश बढ़ेगा।

4.37 ऐसे प्रश्न उठते रहे हैं कि क्या भारत में सरकारी ऋण अवहनीय होता जा रहा है क्योंकि यह स.घ.उ. की अपेक्षा तीव्र गति से बढ़ रहा है। राजकोषीय वहनीयता के लिए यह आवश्यक है कि राजकोषीय घाटे में वृद्धि को बढ़े हुए ऋण के शोधन की क्षमता बढ़ा कर प्रतिसंतुलित किया जाए। यह तर्क दिया गया है कि इस दृष्टि से आस्तियों के सृजन हेतु उधार लेना न्यायसंगत है। इस तथ्य के अलावा भी कि उधार ली गई राशि का 70 प्रतिशत से कुछ कम भाग इस समय पूंजीगत आस्तियों पर खर्च नहीं किया जा रहा है, वहां पर भी नहीं जहां पूंजीगत व्यय हो रहा है, आस्तियों पर प्रतिफल नगण्य है। उच्चतर वृद्धि के माध्यम से

सारणी 4.10
बचत और निवेश (स.घ.उ. के प्रति) संबंधी क्षेत्र-वार शेष

(प्रतिशतांक बिन्दु)

वर्ष	घाटे वाले क्षेत्र		अधिकतावाले क्षेत्र	अन्तर
	सरकारी क्षेत्र	निजी कार्पोरेट क्षेत्र	वित्तीय आस्तियों में घरेलू क्षेत्र की बचत	बचत की तुलना में निवेश की अधिकता
	आईपी-एसपी	आईसी-एससी	एसएच-आईएच	आई-एस
औसत (1985-86 to 1989-90)	7.72	2.37	7.20	2.33
1990-91	8.23	1.47	8.73	3.20
1991-92	6.85	2.56	9.51	0.52
1992-93	6.97	3.79	8.73	1.85
1993-94	7.61	2.14	11.03	0.56
1994-95	7.05	3.43	11.92	1.17
1995-96	5.63	4.65	8.90	1.75
1996-97	5.36	3.58	10.35	1.30
1997-98	5.28	3.80	9.64	1.46
1998-99	7.57	2.65	10.36	1.05
1999-00	7.98	2.11	10.62	1.14
2000-01	8.61	0.94	10.66	0.61
2001-02	8.58	1.42	11.14	-0.32
2002-03	7.54	1.39	10.30	-0.92

स्रोत (मूल आंकड़े) : राष्ट्रीय आय लेखा, के.सां. संगठन

और अधिक प्रतिफल भी ब्याज की बढ़ती हुई देनराशियों को पूरा नहीं कर पा रहा है। वास्तव में, ऋण के प्रति सकल घरेलू उत्पाद के बढ़ते हुए अनुपात सहित राजकोषीय घाटे के उच्च स्तर के कारण ब्याज भुगतानों और पेंशनों को घटा कर सरकार के वर्तमान खर्च में गिरावट हुई है।

4.38 इस बात को ध्यान में रखते हुए कि राजस्व जुटाने की अपेक्षा उधार लेना प्रायः आसान विकल्प है, नीति निर्माताओं को बहिर्मुखी बैंचमार्क उपलब्ध कराने के लिए उधार हेतु प्रायः पूर्वनिर्धारित लक्ष्य निश्चित करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरणार्थ मास्ट्रिक्ट संधि में यूरोपीय मौद्रिक संघ के सदस्यों के लिए दो अलग अलग शर्तें रखी गई हैः (i) प्रत्येक वित्तीय वर्ष में देश का समग्र वित्तीय घाटा अवश्य ही स.घ.उ. के 3 प्रतिशत के बराबर अथवा उससे कम होना चाहिए और (ii) देश के सरकारी ऋण का स्टाक स.घ.उ. के 60 प्रतिशत के बराबर अथवा उससे कम होना चाहिए। यू.के. में वर्ष 1997 से एक गोल्डन नियम का पालन किया जा रहा है जिसके तहत राजकोषीय घाटे को सरकारी निवेश के बराबर रखा जाता है। भारत में भी राजकोषीय घाटे को कुछ निर्धारित लक्ष्य स्तरों के अनुरूप रखने के प्रयास किए गए हैं। ईएफसी ने सुझाव दिया है कि वर्ष 2004-05 में राजकोषीय घाटे को स.घ.उ. के 6.5 प्रतिशत के वांछनीय स्तर पर लाया जाए। दसवीं योजना में राजकोषीय घाटे का औसत आकार योजनावधि में स.घ.उ. का 6.8 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। केन्द्रीय सरकार के लिए एफआरबीएम लक्ष्यों में वर्ष 2008-09 में राजकोषीय घाटा स.घ.उ. का 3 प्रतिशत होने का लक्ष्य रखा गया है।

4.39 राजस्व और वित्तीय घाटों के लक्ष्य किसी पुनर्संरचना कार्यक्रम के अनिवार्य अंश हैं। केन्द्र सरकार की भांति राज्यों के लिए भी संयुक्त रूप से और पृथक-पृथक ऐसे ही लक्ष्य निर्धारित करने की जरूरत होगी। इन लक्ष्यों के निर्धारण के लिए ब्याज दरों के स्तरों सहित प्रमुख वृद्धि परिदृश्य और अन्य पैरामीटरों की जरूरत है। ऐसे लक्ष्यों के निर्धारण हेतु ऋण के गतिक निर्धारकों को ध्यान में रखना उचित होगा। इस विश्लेषण में ऋण स.घ.उ. अनुपात में वृद्धि दो घटकों पर निर्भर करती हैः

(क) स.घ.उ. अनुपात के प्रति प्राथमिक घाटा और (ख) ब्याज दर से ऊपर वृद्धि की अधिकता। यदि वृद्धि दर ब्याज दर के बराबर है तो स.घ.उ. के सापेक्ष ऋण मात्र संचित प्राथमिक घाटों का परिणाम होगा। तथापि, जब तक वृद्धि दर ब्याज दर से अधिक है यह स.घ.उ. के सापेक्ष में उच्चतर ऋण में बदल रहे कुछ प्राथमिक घाटों को खपा सकती है। दूसरी ओर, यदि ब्याज दर वृद्धि दर से अधिक हो जाती है तो ऋण सं.घ.उ. अनुपात दोनों घटकों के परिणामस्वरूप बढ़ जाएगा। एक मुख्य सीमा यह है कि नामिनल वृद्धि दर (जी) और नामिनल ब्याज दर (आई) को वास्तव में बहिर्मुखी रूप में नहीं लिया जा सकता, विशेष रूप में, राजकोषीय घाटे के बढ़ते हुए स्तर विशेष रूप से तब तक राजकोषीय घाटे के उच्च

स्तर ये निवेश के लिए हों, वृद्धि दर को बढ़ा सकते हैं जबकि राजकोषीय घाटों के उच्च स्तर ब्याज दर पर दबाव बना सकते हैं विशेष रूप से जब वित्तीय रूप में घरेलू बचतें सरकार की उन बचतों की मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती जो बड़ी मात्रा में यह गैर सरकारी कार्पोरेट क्षेत्र के लिए छोड़ देती है। ऋण गति के समीकरण का प्रयोग करते हुए कतिपय पूर्वानुमानों के तहत ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जो स.घ.उ. के सापेक्ष में ऋण और वित्तीय घाटे को स्थिर बनाए। यह माना जाता है कि नामिनल वृद्धि दर (जी) और नामिनल प्रभावी ब्याज दरें निर्धारित और बहिर्मुखी होती है। सम्बद्ध परिस्थितियां यह व्यक्त [11] करती हैं किः

(क) ऋण स.घ.उ. अनुपात बी* के स्तर पर स्थिर होगा जहां *= पी(1+जी)/(जी-आई) है,

(ख) स.घ.उ. के प्रति राजकोषीय घाटे का अनुपात एफ* पर स्थिर रहेगा जहां एफ*=पीजी/(जी-आई) है।

4.40 स.घ.उ. के प्रति राजस्व प्राप्तियों के अनुपात जिसे (आर) द्वारा दर्शाया गया है, को दर्शाते हुए इन स्थितियों को प्राथमिक घाटे की बजाए राजस्व प्राप्तियों (आईपी)* के प्रति ब्याज भुगतानों के अनुपात के रूप में, समतुल्य रुप में लिखा सकता था, जैसाकि नीचे दिया गया हे [12]ः

(क) ऋण स.घ.उ. अनुपात स्तर बी* पर स्थिर होगा जहां बी*=(आईपी)* आर(1+जी)/आई है।

(ख) स.घ.उ. के प्रति राजकोषीय घाटा एफ* पर स्थिर होगा जहां एफ*=(आईपी)* आर जी/आई है।

राज्यों के मामले में, जी.एस.डी.पी. के प्रति राजस्व प्राप्तियों के अनुपात और राजस्व प्राप्तियों के प्रति ब्याज भुगतान के अनुपात में सभी राज्यों में काफी भिन्नता है। राज्यों को उपचित राजस्व भी अन्तरणों के रूप में होते हैं। ऋण वहनीयता की स्थितियों को राजस्व प्राप्तियों के प्रति ब्याज भुगतानों के अनुपात के रूप में लेना ज्यादा उपयोगी होगा हालांकि स्थितियों के दो सेट एकसमान हैं।

4.41 वर्तमान भारतीय संदर्भ में, एफआरबीएम ने केन्द्र सरकार के लिए राजकोषीय घाटा स.घ.उ. के 3 प्रतिशत पर निर्धारित किया है। (एऔर बी) संबंधों का प्रयोग करते हुए जिसका अर्थ है [बी*) एफ =(1* जी)/जी][3], यह देखा गया है कि राजकोषीय घाटे के इस स्तर और 12 प्रतिशत की नामिनल वृद्धि दर के लिए ऋण-स.घ.उ. अनुपात समान रूप से 28 प्रतिशत पर स्थिर होगा। इस समय, केन्द्र का ऋण स.घ.उ. अनुपात 53 प्रतिशत के करीब है जिसमें विदेशी ऋण को परम्परागत दरों पर मापा गया है और एनएसएसएफ देनदारियों के उस भाग को शामिल नहीं किया गया है जिसके प्रति राज्य प्रतिभूतियों के रूप में आस्तियां हैं और जिसमें बाजार स्थिरीकरण स्कीम (एमएसएस) को भी शामिल नहीं किया गया है और जिसके लिए नकद शेष की समान राशि धारित की जाती है। चूंकि राजकोषीय घाटे का लक्ष्य एफआरबीएम द्वारा निर्धारित किया गया है इसलिए जब तक वृद्धि ब्याज दर से अधिक बनी रहती है प्राथमिक घाटे को स्थिरीकरण के चरण में बनाए रखा जा सकता है। 12 प्रतिशत नामिनल वृद्धि दर और 7 प्रतिशत ब्याज दर के मिश्रण के लिए यह स.घ.उ. के 1.25 प्रतिशत के बराबर होगा। हमारा विचार हे कि स.घ.उ. के सापेक्ष में 6 प्रतिशत का सम्मिलित राजकोषीय घाटा वित्तीय आस्तियों में घरेलू क्षेत्र की बचतों की उपलब्धता के अनुरूप होगा जो चालू खाते के घाटे के 10 प्रतिशत के वांछनीय स्तर और कार्पोरेट क्षेत्र तथा गैर-विभागीय सरकारी क्षेत्र उपक्रमों की अपेक्षानुसार है। चालू खाते के घाटे के 1.5 प्रतिशत के स्वीकार्य स्तर सहित घरेलू क्षेत्र की स.घ.उ. के 10 प्रतिशत की अन्तरणीय बचतें सरकार के 6 प्रतिशत के राजकोषीय घाटे की व्यवस्था करने के लिए पर्याप्त होंगी जिसमें गैर-सरकारी क्षेत्र द्वारा स.घ.उ. के 4 प्रतिशत और गैर-विभागीय सरकारी उद्यमों द्वारा 1.5 प्रतिशत का आमेलन शामिल होगा। जब राजस्व घाटा शून्य हो जाएगा तो सम्पूर्ण राजकोषीय घाटा निवेश को बढ़ाएगा जिससे स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में कुल निवेश 28 से 30 प्रतिशत की रेंज के स्तर पर पहुंच जाएगा। इस कुल निवेश में घरेलू क्षेत्र स.घ.उ. का लगभग 12 प्रतिशत, निजी क्षेत्र स.घ.उ. का लगभग 8 प्रतिशत और सरकारी क्षेत्र स.घ.उ. लगभग 8 से 10 प्रतिशत निवेश करेगा।

4.42 सम्मिलित राजकोषीय घाटे को स.घ.उ. के 6 प्रतिशत तक सीमित करना राजस्व प्राप्तियों के प्रति ब्याज भुगतानों को केन्द्र के मामले में वर्ष 2002-03 के लगभग 50 प्रतिशत, राज्यों के मामले में 26 और उनके सम्मिलित खाते में 37 प्रतिशत के बहुत ऊंचे स्तर से नीचे लाने के लिए भी जरूरी है। सरकारी वित्तों की पुनर्संरचना करने की प्रस्तावित योजना में इन्हें वर्ष 2009-10 तक कम करके क्रमशः केन्द्र के संबंध में 28 प्रतिशत, राज्यों के संबंध में 15 प्रतिशत और उनके सम्मिलित खातों में 22 प्रतिशत तक करना होगा।

4.43 समग्र राजकोषीय घाटा स.घ.उ. का 6 प्रतिशत होने की वांछनीयता के मद्देनज़र जैसा कि केन्द्र ने अपने उधारों के लिए पहले से ही 3 प्रतिशत का लक्ष्य तय कर लिया है, राज्यों के लिए समग्रतः राजकोषीय घाटे के समान स्तर की अनुमति दी जा सकती है। इस प्रकार गैर-विभागीय उद्यमों सहित सरकारी क्षेत्र के उधार 7.5 प्रतिशत हो सकते हैं। विदेशी ऋण को परम्परागत विनिमय दरों पर मापते हुए सम्मिलित खाते के लिए ऋण स.घ.उ. का तदनुरूपी अनुपात 56 प्रतिशत निर्धारित किया गया है जो वर्ष 1996-97 के अन्त में स.घ.उ. के सापेक्ष में सम्मिलित ऋण के वास्तविक स्तर के निकट है। प्रत्येक राज्यों के संबंध में, पैरा 40 में विनिर्दिष्ट शर्तों का प्रयोग करते हुए राजस्व प्राप्तियों के प्रति ब्याज भुगतानों के अनुपात के रूप में लक्ष्य निर्धारित किए जा सकते हैं। इस पर परिशिष्ट 4.1 में विस्तार से चर्चा की गई है।

4.44 इस बात को ध्यान में रखा जाए कि ऋण-स.घ.उ. अनुपात को वर्तमान स्तरों पर स्थिर रखने और उन्हें वहनीयता के अनुरूप निम्नतर स्तरों अथवा सर्वाधिक अनुकूलता पर कुछ सीमा

तक विचार करने के बाद वांछनीय ऋण-स.घ.उ. अनुपातों पर स्थिर करने में अन्तर है। राजकोषीय समेकन में दो अवस्थाओं में भेद किया जा सकता हैः समायोजन अवस्था और स्थिरीकरण अवस्था। समायोजन अवस्था में ऋण-स.घ.उ. अनुपात में नियमित गिरावट होगी क्योंकि प्राथमिक घाटा समायोजन का मार्ग अपनाता है ताकि राजकोषीय घाटे के 6 प्रतिशत के लक्ष्य को हासिल किया जा सके। ऋण- स.घ.उ. अनुपात में वांछनीय स्तरों तक गिरावट होने के पश्चात प्राथमिक घाटा और राजकोषीय घाटा स्थिर हो जाएंगे।

4.45 इन तर्कों को ध्यान में रखते हुए हम यह सिफारिश करते हैं कि

(i) संयुक्त खाते पर समग्र ऋण-स.घ.उ. अनुपात (विदेशी ऋण को परम्परागत दरों पर मापते हुए) को कम करके कुछ समय में स.घ.उ. के 56 प्रतिशत तक लाने का लक्ष्य निर्धारित किया जा सकता है। चूंकि वर्ष 2004-05 के अन्त में इसका स्तर स.घ.उ. के 81 प्रतिशत पर बहुत ऊंचा होने का अनुमान लगाया गया है इसलिए इसे वर्ष 2009-10 के अन्त तक कम से कम 75 प्रतिशत तक नीचे लाना होगा।

(ii) राजस्व प्राप्तियों के सापेक्ष में सम्मिलित ब्याज भुगतानों का स्तर वर्ष 2004-05 के 34 प्रतिशत से कम करके वर्ष 2009-10 में 22 प्रतिशत तक करना चाहिए और अन्ततः लगभग 17 प्रतिशत तक।

(iii) केन्द्र द्वारा राज्यों को उधार देने की प्रणाली को धीरे-धीरे समाप्त कर देना चाहिए। केन्द्र और राज्यों के लिए ऋण स.घ.उ. अनुपात का दीर्घावधि लक्ष्य प्रत्येक के लिए 28 प्रतिशत होना चाहिए। स.घ.उ. के प्रति राजकोषीय घाटे के अनुपात का उनका लक्ष्य प्रत्येक के संबंध में 3 प्रतिशत होना चाहिए।

राजकोषीय समायोजनः 2005-10

4.46 इस भाग में, हमने वर्ष 2009-10 तक राजकोषीय घाटे की रूपरेखा पर चर्चा की है। एफआरबीएमए की धारा 3 में यह प्रावधान है कि केन्द्र सरकार प्रत्येक वित्तीय वर्ष में संसद के दोनों सदनों के समक्ष निम्नलिखित के संबंध में तीन विवरणियों प्रस्तुत करेगी (i) मध्यावधि वित्तीय नीति विवरणी (ii) राजकोषीय नीति विवरणी और (iii) वृहत आर्थिक ढांचा विवरणी, जिसमें निम्नलिखित के संबंध में मूल्यांकन किया गया होगा (क) स.घ.उ. में वृद्धि (ख) राजस्व शेष तथा सकल राजकोषीय शेष में यथा प्रतिबिम्बित केन्द्र सरकार का राजकोषीय शेष, और (ग) भुगतान संतुलनों के चालू खाते के शेष में यथा प्रतिबिम्बित अर्थव्यवस्था का विदेशी क्षेत्र शेष। वर्ष 2004-05 के बजट में केन्द्रीय राजस्व घाटा स.घ.उ. का 2.5 प्रतिशत तथा राजकोषीय घाटा 4.3 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। एफआरबीएमए के एक भाग के रूप में, वर्ष 2006-07 की अवधि के लिए पूर्वानुमानों का एक और मध्यावधि राजकोषीय नीति विवरणी के एक भाग के रूप में संसद के दोनों सदनों के समक्ष प्रस्तुत किया जा चुका है। इसी बीच केन्द्र सरकार ने कार्यान्वयन हेतु एक कृतिक बल नियुक्त किया है जो एफआरबीएमए के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मध्यावधि राजकोषीय ढांचा तैयार करेगा। कृतिक बल के पूर्वानुमान वर्ष 2008-09 की अवधि के लिए हैं और एक आधारभूत परिदृश्य से संबंधित हैं जो वर्तमान प्रवृत्तियों की अवस्थिति और सुधार परिदृश्य पर आधारित हैं जो देश में अप्रत्यक्ष कराधान के ढांचे में कतिपय बुनियादी परिवर्तन सुझाता है। केन्द्र सरकार ने आयोग को अपना ज्ञापन और पूर्वानुमान प्रस्तुत किए हैं और कृतिक बल के सुधार परिदृश्य के अनुमानों का भी उन्हें वर्ष 2009-10 तक बढ़ाते हुए उल्लेख किया है।

क कृतिक बल के पूर्वानुमान

4.47 कृतिक बल ने केन्द्रीय वित्तों की पुनर्संरचना की योजना बनाई है। राज्य के वित्तों के लिए भी इस योजना का खास महत्व है। कृतिक बल की रिपोर्ट की मुख्य विशेषताओं का सार नीचे दिया गया हैः

(i) अनुच्छेद 268 क के अधीन सेवाओं पर कर लगाने की शक्ति केन्द्र सरकार में निहित है।

(ii) वस्तुओं के मामले में विनिर्माण से परे मूल्य वृद्धि व्यापार की प्रकृति की है जो उनकी थोक अथवा फुटकर बिक्री करने से हो रही है जिसे सेवा के रूप में माना जा सकता है। इसलिए, सरकार इस मूल्यवृद्धि पर कर लगाने की हकदार है।

(iii) राज्यों को सेवाओं पर कर लगाने का हक नहीं है क्योंकि यह विषय संघ सूची में शामिल है। तथापि अनुच्छेद 268 क के तहत सेवाओं पर कर लगाने का कार्य पूर्णतः अथवा आंशिक रूप में राज्यों को सौंपा जा सकता है।

(iv) तत्पश्चात राज्यों को एक बड़े सौदे का प्रस्ताव दिया जा सकता है जिसमें राष्ट्रीय वस्तु एवं सेवा कर (जीसटी) में भागीदारी की मंजूरी दे सकते हैं जो 20 प्रतिशत की दर पर लगाया जा सकता है जिसमें से 12 प्रतिशत केन्द्र लगाएगा और 8 प्रतिशत राज्य लगा सकते हैं।

4.48 कृतिक बल द्वारा प्रदान किए गए अनुमानों के अनुसार, इन परिवर्तनों से राजस्व में खासी वृद्धि होगी। आधारभूत परिदृश्य में प्रत्यक्ष करों में 1.87 प्रतिशत और अप्रत्यक्ष करों में 0.74 प्रतिशत की वृद्धि होने का अनुमान लगाया गया है जिसमें वर्तमान नियमों के तहत सेवाओं पर कर लगाना भी शामिल है। इनके परिणामस्वरूप, स.घ.उ. के प्रति केन्द्र के सकल कर राजस्व अनुपात में काफी सुधार आया है जो वर्ष 2003-04 के स.घ.उ. के 9.2 प्रतिशत से बढ़कर 1.5 प्रतिशत अंक की वृद्धि को दर्शाते हुए वर्ष 2008-09 में 10.7 प्रतिशत हो जाएगा। इतनी वृद्धि होने के बाद भी एफआरबीएमए का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका और वर्ष 2008-09 में राजस्व घाटा स.घ.उ. का 1.66 प्रतिशत है। सुधार के दौर में भी अधिकांश समायोजन स.घ.उ. के प्रति केन्द्र के सकल कर राजस्वों के अनुपात में हुई पर्याप्त वृद्धि से ही किया

गया है जिसने वर्ष 2008-09 में इसे 13 प्रतिशत से ऊपर पहुंचाया है। एक बड़े सौदे के तहत कृतिक बल की जीएसटी की सिफारिश के संबंध में इस तरह के वाद-विवाद में कई मुद्दे आए हैं :

(i) वस्तुओं की मूल्यवृद्धि को सेवा मानते हुए उस पर कर लगाने की केन्द्र को शक्ति की विधिक स्थिति पर संदेह किया गया है। यह एक ऐसा मामला है जो एक बार सही कानून बनने और अधिसूचित हो जाने पर कानूनी मुद्दा बन सकता है।

(ii) केन्द्र के पक्ष में इसका 12.8 का अनुपात इस प्रणाली में उर्ध्वस्थ असंतुलन बढ़ा सकता है विशेष रूप से इसलिए कि निर्माण कार्य संबंधी संविदाओं पर स्टाम्प शुल्क, पंजीकरण शुल्क और बिक्री कर को जीएसटी के तहत मिलाया जाएगा। राज्य भी दरें निर्धारित करने की अपनी स्वायतता खो देंगे जो कराधारों पर स्वायतता रखने के लिए जरूरी है।

(iii) सेवाओं के अन्तर्राज्यीय कराधान के पहलुओं से और समस्याएं बढ़ती हैं। कुछेक ने तर्क दिया है कि अन्तर्राज्यीय विशेषता वाले करों की एक नकारात्मक सूची की जरूरत है। अन्तर्राज्यीय कराधान के मुद्दों का समाधान करने और छूट के दावों और प्रतिपक्षी दावों का निपटान करने के लिए एक समाशोधन गृह प्रणाली के प्रस्ताव से कई तरह की व्यावहारिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

(iv) यदि खर्च करने के निर्णयों को कर के निर्णयों से पूर्णतः अलग कर दिया जाता है तो इससे अक्षमता बढ़ेगी।

(v) सेवाओं पर कर की विभाज्यता की स्थिति अनियंत्रित रहेगी क्योंकि अनुच्छेद 270 के अधीन और इसलिए वित्त आयोग की सिफारिशों के तहत इन्हें बांटा नहीं जा सकता।

4.49 हमारे विचार में, व्यापक जीएसटी का प्रस्ताव आकर्षक है और इसे आगे बढ़ाना चाहिए। लेकिन सम्बद्ध विधिक और प्रशासनिक पहलुओं की विस्तार से चर्चा की जानी चाहिए, विशेष रूप से राज्यों के साथ राज्य स्तरीय वैट के कार्यान्वयन से यथासमय इसे शुरु करने में सुविधा होगी। लेकिन इस सुधारवादी परिवर्तन के बिना भी कर-स.घ.उ. के अनुपात में पर्याप्त वृद्धि संभव होनी चाहिए। इस बात पर ध्यान दिया जाए कि वर्ष 2004-05 के केन्द्रीय बजट में यह अनुमान लगाया गया है कि स.घ.उ. के प्रति सकल केन्द्रीय कर राजस्व में एक वर्ष में 1 प्रतिशत अंक की वृद्धि होगी।

ख. एफआरबीएमए के तहत विवरणियां

4.50 अर्थव्यवस्था और केन्द्रीय वित्त पोषण की सामान्य समीक्षा को प्रस्तुत करने वाली एक वृहत आर्थिक ढांचा विवरणी वर्ष 2004-05 के बजट के साथ पहली बार संसद को प्रस्तुत की गई है। मध्यावधिक राजकोषीय नीति विवरणी में वर्ष 2006-07 तक के आवर्ती (रोलिंग) लक्ष्य दिए गए हैं। इसमें सामान्य रूप में स.घ.उ. में 12 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर के पूर्वानुमान पर कर-राजस्व का अनुमान लगाया गया है। इस पूर्वानुमान के तहत केन्द्र के सकल कर राजस्व में प्रत्यक्ष करों में 26 प्रतिशत और अप्रत्यक्ष करों में 19 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि के आधार पर औसतन 22 प्रतिशत प्रति वर्ष की वृद्धि होने की आशा है। इसलिए प्रत्यक्ष करों की उपलक्षित वृद्धि 2.15 प्रतिशत और अप्रत्यक्ष करों की उपलक्षित वृद्धि 1.58 प्रतिशत के बराबर है। स.घ.उ. के समानुपात के रूप में कर राजस्व बजट अनुमान 2004-05 के 10.2 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2005-06 में 11.1 प्रतिशत होने का लक्ष्य रखा गया है। यह तर्क दिया गया है कि वर्ष 1991 से कर दरों में कमी लाने, प्रक्रियाओं को सरल बनाने, मुकदमेबाजी कम करने, कर तंत्र को और व्यापक बनाने तथा सामान्यतया स्वैच्छिक रूप से इनके अनुपालन में वृद्धि करने सम्बन्धी सुधार किए गए हैं। राजकोषीय नीति योजना विवरणी (एफपीएसएस) में इस बात का उल्लेख मिलता है कि राजकोषीय घाटे का वित्त प्रबंध लगभग पूर्णतया घरेलू है। इसमें यह भी उल्लेख किया गया है कि सरकारी खर्च की वृद्धि में कुछ विवेकपूर्ण नियंत्रण किया गया है। इसमें सब्सिडियों की पुनर्संरचना की बात कही गई है ताकि इनका लाभ वे लोग उठा सकें जिन्हें इन सब्सिडियों का लाभानुभोगी नहीं बनाया गया है। एफपीएसएस में धीरे-धीरे वस्तुओं और सेवाओं के समेकित कराधान की ओर बढ़ने तथा सीमाशुल्क को आसियान देशों में विद्यमान स्तरों तक कम करने की सरकार की वचनबद्धता व्यक्त की गई है।

राजकोषीय समायोजन

4.51 पुनर्संरचना के लिए योजना पर विचार करते समय सामान्यतः एक आधारभूत परिदृश्य तैयार किया जाता है जो इस पूर्वधारणा पर संभावित परिणामों को प्रतिबिम्बित करता है कि विद्यमान राजकोषीय प्रवृत्तियां भविष्य में जारी रहेंगी। इसकी तुलना में सुधार परिदृश्य संशोधन का मार्ग दिखाता है। हमारे विश्लेषण में एफआरबीएमए के परिणामस्वरुप और हमारी अपनी सिफारिशों का अनुसरण करते हुए वर्तमान प्रवृत्तियां जारी नहीं रह सकती। इसलिए एक मूल परिदृश्य तैयार करना प्रासंगिक नहीं होगा। इसकी बजाए हम मुख्य सुधार परिदृश्य पर ध्यान केन्द्रित करेंगे और इस सुधार परिदृश्य में समायोजन के वैकल्पिक मार्गों पर विचार करेंगे। सारणी 4.11 में वर्ष 2005 से 2010 तक की अवधि के दौरान और उससे पूर्व के वृहत आर्थिक परिदृश्य के प्रमुख अन्तरों को दर्शाया गया है। केन्द्र और राज्य के सम्मिलित खाते में राजकोषीय घाटा 6 प्रतिशत तक कम करना होगा और राजस्व घाटे को कम करके शून्य स्तर पर लाना होगा। इससे समग्र बचत दर में वृद्धि होती है तथा साथ ही स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में सरकार का पूंजी व्यय बढ़ता है। परिणामस्वरुप, जैसे ही समग्र निवेश दर बढ़ जाती है तो वृद्धि दर 7 प्रतिशत से अधिक पर स्थिर हो जाती है। यह माना जाता है कि मार्जिन पर ब्याज दर वर्तमान स्तरों पर बनी रहेंगी जिससे केन्द्र और राज्यों की औसत ब्याज दर में निरन्तर गिरावट होगी। जैसे ही राजकोषीय घाटा कम होगा और मुद्रास्फीति नियंत्रण में आ जाएगी। ब्याज दर को बढ़ाने पर कोई दबाव नहीं होगा।

सारणी 4.11
वृहत आर्थिक परिदृश्यः वर्तमान एवं पूर्वानुमान अवधि

(स.घ.उ. को प्रतिशत के रूप में)

	2004-05 (अनुमान)	2009-10 (पूर्वानुमान)
स.घ.उ. वृद्धि (स्थिर मूल्यों पर) (प्रतिशत प्रतिवर्ष)	6.5	7.0
मुद्रास्थिति दर (प्रतिशत प्रतिवर्ष)	6.0	5.0
बचत दर	24.0	26.0
निवेश दर	24.5	27.5
चालू खाते का घाटा	-0.5	1.5
राजकोषीय घाटा	8.9	6.0
राजस्व घाटा	4.5	0.0
सरकार का पूंजीगत व्यय	5.6	6.6

4.52 पुनर्संरचना की योजना राजस्व को बढ़ाने और व्यय को पुनर्संरचित करने, दोनों, पर ही निर्भर करती है। इस कार्यक्रम के मुख्य अवयव हैः केन्द्र और राज्यों, दोनों, के लिए राजस्व और राजकोषीय घाटों में लक्षित वृद्धि प्राप्त करने समय सं.घ.उ. के सापेक्ष में कर राजस्वों और पूंजीगत खर्चों में वृद्धि। सारणी 4.12 दर्शाती है कि केन्द्रीय और राज्य सरकारों के संयुक्त खाते में 60 प्रतिशत से अधिक समायोजन राजस्व पक्ष से होता है। कर स.घ.उ. अनुपात में वृद्धि की मात्रा 2.0 प्रतिशत निर्धारित की गई है। स.घ.उ. के प्रति समग्र राजस्व में वृद्धि 3.0 प्रतिशत अंक के निकट है। व्यय पक्ष में, स.घ.उ. के प्रति सम्मिलित राजस्व व्यय में गिरावट 1.7 प्रतिशत अंक है। हालांकि, कुल पूंजी व्यय में गिरावट आई है लेकिन प्राथमिक व्यय में वृद्धि हुई हैं क्योंकि स.घ.उ. के सापेक्ष में पूंजी व्यय में लगभग 1 प्रतिशत अंक की वृद्धि हुई है। जैसाकि राजकोषीय घाटा समाप्त हो गया है, ऋण वसूलियों और विनिवेश प्राप्तियों के रूप में ऋण-भिन्न प्राप्तियों द्वारा अनुपूरित राजकोषीय घाटे का पूंजी व्यय के लिए प्रयोग किया जा सकता है। चूंकि लक्षित सम्मलित राजकोषीय घाटा 6 प्रतिशत है इसलिए पूंजी व्यय स.घ.उ. के 6 प्रतिशत से अधिक होगा। हमने विनिवेश प्राप्तियों के रूप में एक अल्प राशि मुहैया कराई है। हम आशा करते हैं कि वास्तविक राशि अपेक्षाकृत अधिक होगी तथा तदनुसार पूंजी व्यय निर्धारित मात्रा से अधिक होगा।

4.53 ऋण की पुनर्संरचना की हमारी योजना मों केन्द्र के प्रति राज्यों के ऋण का समेकन शामिल है, जिसका वापसी भुगतान विनिर्दिष्ट वर्षों में किया जाएगा। यह भी सुझाव दिया जाता है कि केन्द्र सरकार को राज्यों के उधारों में उत्तरोत्तर अपनी मध्यस्थता को घटाते जाना चाहिए। जहां आवश्यक हो, जैसाकि विदेशी सहायता के मामले में है, यह सरकारी खाते के माध्यम से की जानी चाहिए। यदि राज्यों को आगे और उधार देना केन्द्र के राजकोषीय घाटे का हिस्सा बना रहता है तो 3 प्रतिशत राजकोषीय घाटा बहुत कम होगा। जैसे ही केन्द्र राज्यों को उधार देना बंद कर देता है राज्यों द्वारा की गई वापसी अदायगियां केन्द्र को पूंजी व्यय के अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए उपलब्ध हो जाती हैं। राज्यों को, राज्यों के वित्तों की पुनर्संरचना की योजना में राजकोषीय घाटे के लिए निर्धारित मार्ग के अनुसार अपनी निवल उधारों की आवश्यकता के अलावा वापसी अदायगी की राशि बजट से उधार लेने की अनुमति होनी चाहिए।

सारणी 4.12
सम्मिलित वित्तों के संबंध में सुझाई गई पुनर्संरचना का सार

सम्मिलित वित्त	2004-05	2009-10	समायोजन वर्ष 2009-10 में से 2004-05 को घटा कर	औसत समायोजन प्रति वर्ष
कर राजस्व	15.6	17.6	2.0	0.40
कर-भिन्न राजस्व	2.5	3.4	0.9	0.18
कुल राजस्व प्राप्तियां	18.1	21.0	2.9	0.58
ब्याज भुगतान	6.1	4.5	-1.6	-0.31
कुल राजस्व व्यय	22.6	21.0	-1.7	-0.33
पूंजी व्यय	5.6	6.6	1.0	0.20
कुल व्यय	28.3	27.6	-0.7	-0.13
प्राथमिक व्यय	22.2	23.1	0.9	0.18
राजस्व घाटा	4.5	0.0	-4.5	-0.90
राजकोषीय घाटा	8.9	6.0	-2.9	-0.57
प्राथमिक घाटा	2.8	1.5	-1.3	-0.26
ब्याज भुगतान/राजस्व प्राप्तियां	33.7	21.6	-12.1	-2.42
बकाया देनदारियां	80.8	74.5	-6.3	-1.26

सारणी 4.13
केन्द्र और राज्यों के वित्तों के सम्बन्ध में सुझाई गई पुनर्संरचना का सार

सम्मिलित वित्त	2004-05	2009-10	समायोजन वर्ष 2009-10 में से 2004-05 को घटा कर	औसत समायोजन प्रति वर्ष
केन्द्र के वित्त				
सकल कर राजस्व	9.7	10.9	1.2	0.24
कर राजस्व (केन्द्र को निवल)	7.2	7.9	0.8	0.16
कर-भिन्न राजस्व	2.2	2.2	0.0	0.01
कुल राजस्व प्राप्तियां	9.4	10.2	0.8	0.17
ब्याज भुगतान	4.2	2.8	-1.3	-0.26
कुल राजस्व व्यय	11.9	10.2	-1.7	-0.33
पूंजी व्यय	3.0	3.5	0.5	0.10
कुल व्यय	14.8	13.7	-1.2	-0.23
प्राथमिक व्यय	10.7	10.8	0.2	0.03
राजस्व घाटा	2.5	0.0	-2.5	-0.50
राजकोषीय घाटा	4.5	3.0	-1.5	-0.29
प्राथमिक घाटा	0.3	0.2	-0.2	-0.03
ब्याज भुगतान/राजस्व प्राप्तियां	44.5	28.0	-16.6	-3.32
ऋण (वर्ष के अन्त में समायोजित देनदारियां)	53.0	43.7	-9.3	-1.86
राज्यों के वित्त				
राज्यों के निजी कर राजस्व	5.9	6.8	0.8	0.17
कर राजस्व	8.4	9.7	1.3	0.25
निजी कर-भिन्न राजस्व	1.2	1.4	0.2	0.03
कर-भिन्न राजस्व	3.2	3.5	0.3	0.07
कुल राजस्व प्राप्तियां	11.6	13.2	1.6	0.32
ब्याज भुगतान	2.9	2.0	-0.9	-0.18
कुल राजस्व व्यय	13.6	13.2	-0.4	-0.08
पूंजी व्यय	2.6	3.1	0.5	0.10
कुल व्यय	16.2	16.3	0.1	0.01
प्राथमिक व्यय	13.3	14.3	1.0	0.20
राजस्व व्यय	2.0	0.0	-2.0	-0.40
राजकोषीय घाटा	4.5	3.0	-1.5	-0.30
प्राथमिक घाटा	1.6	1.0	-0.6	-0.12
ब्याज भुगतान/राजस्व प्राप्तियां	24.9	15.0	-10.0	-1.99
ऋण (वर्ष के अन्त में समायोजित देनदारियां)	30.3	30.8	0.6	0.11
ज्ञापनः				
केन्द्र को राज्यों के ब्याज भुगतान	0.9	0.3	-0.7	-0.13

टिप्पणीः सम्मिलित कर-भिन्न राजस्वों को केन्द्र के कर-भिन्न राजस्व + राज्यों के निजी कर-भिन्न राजस्व-राज्यों से केन्द्र को ब्याज भुगतान के रूप में परिभाषित किया गया है।

4.54 सारणी 4.13 में, सुझाई गई पुनर्संरचना का सार केन्द्र और राज्यों के वित्तों के लिए अलग-अलग दिया गया है। कर राजस्वों के संबंध में केन्द्रीय और राज्य दोनों कर वर्ष 2009-10 में कर-स.घ.उ. अनुपातों में वृद्धि दर्शाते हैं लेकिन केन्द्र के मामले में वृद्धि की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है। व्यय के पक्ष में दोनों ही मामलों में पूंजी व्यय में वृद्धि हुई है और स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में ब्याज भुगतानों में गिरावट हुई है। दोनों मामलों में, राजकोषीय घाटे का लक्ष्य स.घ.उ. को 3 प्रतिशत रखा गया है और केन्द्र द्वारा राज्यों को उधार देना कम से कम कर दिया गया है अथवा इसे बिल्कुल बंद कर दिया गया है। अपरिहार्य मामलों में यह भारत की समेकित निधि के माध्यम से देने की बजाए सरकारी खाते के माध्यम से दिया जाना चाहिए। हम नीचे प्रस्तावित पुनर्संरचना के विभिन्न आयामों पर चर्चा करेंगे।

पुनर्संरचना के आयाम

4.55 हमने सरकारी वित्तपोषण की एक बहु-आयामी पुनर्संरचना की सिफारिश की है जिसका उद्देश्य सरकारी वितपोषण प्रबंधन के गुणात्मक तथा मात्रात्मक दोनों पहलुओं पर गौर करना है। विशेष रूप से प्रस्तावित पुनर्संरचना में निम्नलिखित विषय शामिल हैं।

(i) कर सुधारों का उद्देश्य करों की विकृति रहित और राजस्व लोच प्रणाली तैयार करना है जिसमें कर दरें न्यून हों, कर श्रेणियों की संख्या सीमित हो और वे स्थिर हों।

(ii) ऐसी सेवाओं के मामले में जिनमें आर्थिक सहायता प्रदान करने का कोई स्पष्ट आधार नहीं है, कर-भिन्न राजस्व जहां अल्पावधि लक्ष्य के रूप में प्रयोक्ता प्रभार वर्तमान लागतों पर वसूलियां सुनिश्चित करते हैं और जिनका उद्देश्य दीर्घावधि में स्वीकार्य क्षमता स्तरों पर मापी गई लागतों की पूरी वसूली करना है ये उधारों की औसत लागत को कवर करने वाले निवेश पर लाभ की दरें भी सुनिश्चित करते हैं।

(iii) व्यय की पुनर्संरचना जो इसके आकार और क्षेत्रवार आवंटनों से संबंधित है, का उद्देश्य गलत आवंटन, योजनाओं के डिजाइन और कार्यान्वयन तथा सेवाओं के वितरण से उत्पन्न अक्षमताओं को दूर करना है;

(iv) सब्सिडियों को उनकी समग्र मात्रा में कमी करते हुए स्पष्ट बनाकर उनकी परादर्शिता को बढ़ाते और उनके लक्ष्य निर्धारण में सुधार करते हुए युक्तिसंगत बनाना है;

(v) उन मामलों में जहां प्राकृतिक एकाधिकारों और नीतिगत कारणों के अलावा सरकार की भागीदारी को कम करने का ठोस मामला हो, सरकारी क्षेत्र की पुनर्संरचना करना;

(vi) ऐसे मामलों में, जहां अन्तरणों को एकसमान करने को बहुत ज्यादा महत्व दिया जाता हो और उन्हें स्थानीय निकायों को विस्तारित किया जाता है राजकोषीय अन्तरण प्रणाली।

(vii) योजना की प्रक्रिया के लिए एक परिष्कृत भूमिका का सुझाव देना।

(viii) स्थानीय सरकारी वस्तुओं के वितरण का एक और अधिक कारगर साधन बनने के लिए स्थानीय निकायों का भूमिका को मजबूत बनाना;

(ix) प्रत्येक राज्य के लिए उधारों की वार्षिक उच्चतम सीमा निर्दिष्ट करने की जरुरत सहित राज्यों के लिए ऋणों की मध्यस्थता करने और कमी वाले बजट को कार्यान्वित करने में केन्द्र सरकार की भूमिका, और

(x) ऋण और घाटों की उच्चतम सीमा निर्धारित करने तथा राज्य स्तर के राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान के माध्यम से उनका अनुवीक्षण (मानिटरी) करने की प्रक्रियाओं सहित संस्थागत ढांचो का सुझाव देना।

राजस्व पुनर्संरचना

4.56 राजस्व पुनर्सरचना पर विचार करते समय, हम यह मानते हैं कि केंद्रीय वस्तु करों के कर-स.घ.उ. अनुपात में गिरावट को केवल कुछ सीमा तक केन्द्रीय प्रत्यक्ष करों में हुई बढ़ोतरी द्वारा कम किया गया है। इससे केन्द्र तथा राज्य सरकारों के वित्तपोषण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। तथापि, इनमें से कुछ परिवर्तन दक्षतापूर्वक करों के विभिन्न सोपानों को घटा रहे हैं। विस्तृत कर आधार और निम्न दरें, सीमित दर श्रेणियां, कर सोपानों का अभाव था। न्यूनतम छूट तथा अन्तर्राज्यीय व्यापार में कर अवरोधों का अभाव वस्तुओं तथा सेवाओं के कराधान की वांछनीय प्रणाली को स्पष्ट करेगा। इस प्रकार की प्रणाली को राज्यों के साथ भी सुमेलित किया जाए ताकि कर दरों की प्रतिस्पर्द्धी गिरावट से बचा जा सके। जहां केन्द्र सरकार के कर सम्बन्धी निर्णय राज्य सरकारों तथा इसके विपरीत क्रम में कर आधार को प्रभावित करते हैं जैसाकि बिक्री कर तथा संघ उत्पाद शुल्कों के मामले है, वहां सामान्य कर आधारों के उपयोग में शीर्ष स्तर पर समन्वय की जरुरत है। इसलिए केन्द्रीय बिक्री कर जैसे समेकित देशव्यापी बाजार के संबंध में राज्य स्तर मूल्य वर्धित कर (वैट) का कार्यान्वयन तथा कर सम्बन्धी अवरोधों को हटाने से कर सुधारों के दक्षता प्रभावों को मजबूती मिलेगी।

4.57 राज्यों ने केन्द्र के कुछ ही देर बाद कर सुधार शुरु किए थे। विशेष रूप से इन राज्यों ने बिक्री करों के संबंध में दर श्रेणियां कम कीं, छूटों में कमी कर दी और न्यूनतम दरें शुरु कीं। इन बदलावों के पश्चात ठोस राजस्व लाभ हुए थे। राज्य स्तर पर मूल्य वर्धित कर (वैट) के कार्यान्वयन को सुसाध्य बनाने हेतु राज्य वित्त मंत्रियों की अधिकार प्राप्त समिति दिशा-निर्देशों के तहत अब कुछ समय से प्रयास जारी हैं। वित मंत्री ने वर्ष 2004-05 का बजट पेश करते समय अपने भाषण में "मूल्यवर्धित कर (वैट) के कार्यान्वयन के प्रति राज्यों के बीच व्यापक सर्वसम्मति और 1 अप्रैल, 2005 को कार्यान्वनय की तारीख नियत होने" का उल्लेख किया था। यदि इस तारीख से राज्य स्तर पर मूल्य वर्धित कर (वैट) का कार्यान्वयन किया जाए, तो इससे क्रमिक गिरावट के कारण होने वाली बाधाओं में और कमी होगी। हम यह सिफारिश करते हैं कि वस्त्र, तम्बाकू और चीनी जैसे अतिरिक्त सीमा शुल्क वाली मदों से संबंधित कर मूल्य व्यवस्था औपचारिक रूप से वापस ली जानी चाहिए तथा इन मदों को राज्य मूल्य वर्धित कर के समग्र अभिकल्प में समेकित किया जाना चाहिए जिसमें 4 प्रतिशत की कोई उच्चतम सीमा नहीं होनी चाहिए तथा वस्तुतः घोषित वस्तुओं की संपूर्ण व्यवस्था की संगतता कर पुनः परीक्षण किया जाना चाहिए। तथापि, सेवाओं का कराधान विखंडित और अनियमित रहा। यदि राज्य स्तर पर वैट को राज्यों द्वारा कार्यान्वित किया जाए तो यह प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है कि प्रत्येक और समग्र तौर पर राज्य-कर राजस्वों का कैसा प्रभाव होगा, विशेषतः उस समय जब बदली हुई प्रणाली का प्रारंभ इस आयोग की सिफारश की अवधि के साथ-साथ हो। राजस्वों पर राज्य-मूल्य वर्धित कर (वैट) के संभावित प्रभाव पर एक दृष्टिकोण बनाने के उद्देश्य से हमने दो अध्ययन [13] किए थे, एक वैट के राजस्व प्रभाव से सीधे संबंधित है, और दूसरा राज्य स्तर पर कर सुधारों की राजस्व पर संभाव्यता से जो राज्य तथा केन्द्र कर राजस्वों की अन्तर्निर्भरता पर ध्यान देता है। इन अध्ययनों से यह निश्चित हुआ है कि यदि उचित रूप से तैयार किया जाय तो राज्य स्तर वैट

मध्यावधि से लंबी अवधि तक राजस्व वर्धित सिद्ध होगा। यदि कोई हानि होगी तो वह क्षणिक ही होगी है। राज्य स्तर पर वैट का कार्यान्वयन सुसाध्य और इसकी राजस्व निष्पादन क्षमता में सुधार होगाः यदि राज्यों के अन्तर्गत और राज्यों उनमें उत्पादन, खपत और वस्तुओं और सेवाओं के विक्रेतावार प्रवाह से संबंधित संग्रहण तथा सूचना विनियम के लिए एक केन्द्रीकृत संस्थागत व्यवस्था स्थापित कर ली जाती है। हम यह समझते है कि केन्द्र सरकार एक उचित व्यवस्था की जांच कर रही है, जिसके जरिए ऐसी क्षणिक हानियों की प्रतिपूर्ति की जा सके। यह उल्लेख किया जाता है कि राजस्व में वृद्धि लाने हेतु अधिकतर वस्तुओं को 12 प्रतिशत की प्रस्तावित स्थायी दर के तहत रखा जाना चाहिए। राज्यों को यदि वे चाहें तो उच्चतम दर का प्रयोग करने का विकल्प दिया जा सकता है। सुप्रतिपादित सिद्धांतों के तहत लघु संख्यक वस्तुओं को 4 प्रतिशत की प्रस्तावित निम्न दर श्रेणी के तहत रखा जाए। केन्द्रीय बिक्री कर को शीघ्र चरणबद्ध रूप से समाप्त कर दिया जाए।

4.58 हमारी पुनर्संरचना योजना में कर-राजस्व अनुपात 2 प्रतिशतांक तक बढ़ा है, जिसमें केन्द्र तथा राज्य दोनों का योगदान है। राज्यों के संबंध में मूल्यवर्धित कर (वैट) को स्वीकार करने से मध्यवधि से दीर्घावधि में राजस्व की वृद्धि होने की संभावना है। यदि कतिपय राज्यों के राजस्व में कोई गिरावट आती है तो उसके कम और क्षणिक होने की संभावना हे। हमारा यह विचार है कि इस परिवर्तन से कुछ हद तक खपत वाले राज्यों के लिए कुछ संसाधनों में वृद्धि एवं परिवर्तन होगा। इस प्रकार इन परिवर्तनों से विषम स्तरीय और समस्तरीय दोनों ही लाभ होंगे। विषमस्तरीय लाभ आधार में वृद्धि के कारण होगा क्योंकि बाधा संबंधी अदक्षताएं कम हो जाती हैं। सापेक्ष रूप से खपत वाले राज्य अधिक प्राप्ति करेंगे जिससे समस्तरीय लाभ उपचित होंगें। संविधान के 88वें संशोधन के अनुसरण में सेवाओं के कराधान संबंधी मामले का निपटान महत्वपूर्ण हो जाता है। चूंकि सेवा कर को अनुच्छेद 268क के तहत रखा गया है इसलिए राज्यों के साथ अपने राजस्वों का बंटवारा वित्त आयोग के अधिकार क्षेत्र के बाहर है। यह इस विषय के लेन-देन के संभाव्य विकल्पों के बीच बेहतर नहीं रहा होगा। जैसी मामलों की स्थिति हो, केन्द्र, राजस्वों के संग्रहण करने और प्रतिधारण करने के लिए राज्यों को निश्चित सेवाएं प्रदान कर सकता है, लेकिन कर केन्द्र द्वारा लगाया जाएगा। जैसा कि पहले संकेत दिया जा चुका है, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि इस नयी व्यवस्था के अन्तर्गत राज्यों को मिलने वाला राजस्व राज्यों को हिस्से में मिलने वाले लाभ से कम नहीं होना चाहिए क्योंकि समग्र सेवा कर प्राप्ति एक शेयर किए जाने वाले पूल का ही भाग रही थी। हमने कर अंतरण की प्रस्तावित योजना में इस पूर्वानूमान को स्थान दिया है।

कर-भिन्न राजस्व

4.59 कर भिन्न राजस्व स्रोतों के बेमेल मिश्रण में सरकार द्वारा दिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज प्राप्तियां इक्विटी निवेश पर लाभांश, सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं के लिए प्रयोक्ता प्रभारों और टैरिफ शामिल हैं। कर भिन्न राजस्व सकल घरेलू उत्पाद के सापेक्ष में केन्द्र तथा राज्यों के सम्मिलित राजस्वों में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के लगभग 3 प्रतिशत पर स्थिर रहे हैं। निजी वस्तुओं और सेवाओं के संदर्भ में, लागत वसूली का सिद्धांत लागू करना चाहिए और जहां लागतें पूरी तरह वसूल नहीं की जातीं वहां प्रत्यक्ष सब्सिडी प्रदान की जानी चाहिए इस तरह सरकारी वित्तों का प्रबंधन आवश्यक पारदर्शिता प्रदान करेगा और राजकोषीय हस्तक्षेप की क्षमता में सुधार जाएगा। ब्याज प्राप्तियों और लाभांशों के संदर्भ में, यह मामला सरकारी उद्यमों के सुधार से जुड़ा है और प्रयोक्ता प्रभारों का प्रश्न सब्सिडी से जुडा हुआ है। जहां रॉयल्टी देय हैं, यह यथामूल्य आधार पर होनी चाहिए। हमारी पुनर्संरचना योजना जीडीपी के सापेक्ष में कर भिन्न राजस्व में एक ठोस वृद्धि का प्रस्ताव करती है।

व्यय पुनर्संरचना

4.60 व्यय पुनर्संरचना के संबंध में, आर्थिक क्रियाकलापों में सरकार के हस्तक्षेप के मूलभूत उद्देश्यों तथा केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच उत्तरदायित्वों के समनुदेश के लिए मूलभूत उद्देश्यों का उल्लेख करने की आवश्यकता है। इस सदंर्भ में, यह भी महत्वपूर्ण है कि सरकारी व्यय को गुणवत्ता, पहुंच और सरकारी सेवाओं के परिणामों के साथ सम्बद्ध। यदि सरकारें ऐसे अनेक क्षेत्रों में जहां निजी क्षेत्र आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सकता है, कम संसाधनों को ज्यादा क्षेत्र में फैलाने के बजाए अपने प्राथमिक उत्तरदायित्वों पर अधिक ध्यान केंद्रित करें तो यह कार्य सुसाध्य बन जाएगा। सरकार की मुख्य भूमिका रक्षा, नियम व कानून और सामान्य प्रशासन जैसे सार्वजनिक वस्तुओं को उपलब्ध कराना है। यह एक प्रकार की बाजार असफलता को दर्शाता है। सरकारों की भूमिका शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बड़ी सकारात्मक बाह्यकारक वस्तुओं और सेवाओं को प्राप्त करना है। विस्तार से यदि सार्वजनिक वस्तुओं का क्षेत्र रक्षा की तरह राष्ट्रव्यापी हो तो ये सेवाएं केन्द्र सरकार को सौंप दी जानी चाहिए। सेवाएं, यदि सार्वजनिक वस्तुओं का क्षेत्र प्रदेशों तक सीमित हैं अथवा बाह्य परक उपयोगिता स्वास्थ्य सेवाओं की तरह अधिक सीमित क्षेत्र में है तो ये राज्य सरकारों को सौंपी जा सकती हैं। यह विदित है कि लाभों के रह जाने के कई उदाहरण हो सकते है, जिसमें से कुछ को अनुदानों की उचित योजना द्वारा राज्य स्तर के को अन्तरीकृत किया जा सकता है। इस बात की जांच करने की आवश्यकता महसूस की जाती है कि क्या केन्द्र सरकार ऐसी अनेक जिम्मेदारियों में भाग ले रही है जोकि वैधानिक रूप से राज्यों के अधिकार-क्षेत्र से संबंधित हैं। दोनों ही स्तर की सरकारों ने अनेक निजी वस्तुओं का प्रावधान किया है, जो सार्वजनिक तथा प्राथमिकता आधारित वस्तुओं के संबंध में सेवा की मात्रा और गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। सरकारी व्यय की पुनर्संरचना के दो मुख्य कारक जीडीपी के सापेक्ष में आधारभूत ढांचे पर ध्यान केंन्द्रित पूंजी व्यय की वृद्धि और राज्य के उत्तरदायित्वों के रूप में सूचीबद्ध विषयों पर केन्द्र सरकार के व्ययों में कमी करना है।

व्यय से लेकर परिणाम तक

4.61 पारंपरिक बजटीय कार्यकलाप, इस बात की ओर ध्यान दिए बिना कि कैसे सरकारी व्यय उत्पादन और परिणामों में अंतरित किया जाता है, विभिन्न शीर्षों में संसाधनों के आवंटन पर

केन्द्रित रहा है। उत्पादन सरकारी व्यय का सीधा परिणाम होता है और उस के नतीजे अंतिम फल होते है। इस प्रकार शिक्षा के संदर्भ में एक नया स्कूल खोलना अथवा एक नये अध्यापक की नियुक्ति करना एक उत्पादन है तथा निरक्षता की दर में कमी लाना उस का फल है। क्षमता संबंधी मामलों पर विचार करना इस संदर्भ में अनिवार्य हो जाता है कि समान परिणाम को निम्न लागतों पर प्राप्त किया जा सकता है या नहीं और समान लागतें बेहतर परिणामों दे सकती है या नहीं। बजटीय सुधारों के महत्वपूर्ण भाग में व्यय के बीच संबंध की सूचना और बजट के आकार और विभिन्न शीर्षों के बीच उसके आवंटन के निर्धारण के अनुसार वास्तविक परिणामों के निर्माण में तदनुरुपी निष्पादन अवश्य शामिल करने चाहिए। हालांकि विगत में निष्पादन बजटिंग को आरंभ करने की कोशिशें रहीं है, लेकिन इस तरह के प्रयासों का कोई महत्व नहीं रहा है। केन्द्र और राज्य दोनों ही स्तर पर निष्पादन बजटिंग को बजटों की तैयारी व मूल्यांकन के एकीकृत भाग के रूप में लाने की आवश्यकता है। इस प्रकार सरकारी व्यय के प्रबंधन को अर्थव्यवस्था क्षमता और प्रभावकारिता द्वारा निर्देशित किया जाए।

सब्सिडियां

4.62 बजटीय सब्सिडियां प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों ही प्रकार की हो सकती हैं। जब सब्सिडियां बजट में प्रत्यक्ष रूप से निश्चित की जाती है तो वह व्यय प्रबंधन में पारदर्शिता लाती है। वित्त मंत्रालय द्वारा वर्ष 1997 में निकाले गये चर्चा पत्र के अनुसार बजट में कई छिपी सब्सिडियां मौजूद होती हैं। ये इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि इन सब को उपलब्ध कराने में लगने वाली लागतों को प्रयोक्ताओं अथवा लाभभोगियों से वसूल नहीं किया जाता। शिक्षा, और स्वास्थ्य जैसी प्राथमिकता वस्तुओं के संबंध में सब्सिडी प्रदान करना वांछनीय हो सकता है। लेकिन सब्सिडी प्रदान करने की वांछित सीमा को स्पष्ट तरीके से तैयार किया जाए। अनेक अध्ययनों [14] ने यह दर्शाया है कि निजी वस्तुओं के सरकारी प्रावधान में वसूल न की गई लागतों के रूप में आकलित सरकारी सब्सिडियां अधिक मात्रा में हैं, जो सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 13 से 14 प्रतिशत तक होंगी। कई मामलों में सब्सिडी अक्षमताओं में वृद्धि करती है अथवा कहीं उसमें सहायक है। अक्सर सब्सिडियां बेकार हो जाती हैं क्योंकि वे उद्देशित लाभभोगियों तक नहीं पहुंच पाती हैं। वित्त मंत्रालय द्वारा वर्ष 1997 में निकाले गये चर्चा पत्र में इन में से कई समस्याओं को दर्शाया गया है और सब्सिडी सुधार के लिए उपाय का सुझाव भी दिया गया, जिसमें सब्सिडियों की मात्रा में कमी करना, निविष्टि-आधारित सब्सिडियों को हटाना, इन सब्सिडियों को प्रत्यक्ष बनाना और उनके लक्ष्य में सुधार लाना शामिल हैं। व्यय सुधार आयोग ने खाद्य एवं उर्वरक सब्सिडियों की भी विस्तार से जांच की और सुधारों की एक कार्यसूची का सुझाव भी दिया है। इन प्रयासों के बावजूद, केन्द्रीय बजट में सब्सिडियों की मात्रा अधिक रही। वर्ष 2002-2003 में केन्द्र के सकल राजस्व प्राप्तियों का लगभग 18 प्रतिशत है। सब्सिडियां कम करने के लिए विशेषतः उर्वरकों तथा पेट्रोलियम के क्षेत्र में पहले लाई गई कुछ वचनबद्धताओं में कमी न की जाए। सब्सिडियों में वृद्धि को नियंत्रित रखने के लिए केन्द्र को एक कार्यक्रम तैयार करना चाहिए। राज्यों के मामलों में, सब्सिडी प्रदान करने की प्रक्रिया का बहुत बड़ा भाग छिपा रहता है क्योंकि सेवाओं की लागतें बढ़ती रहती हैं जबकि लागतों के अनुपात में वसूलियां अत्यधिक कम हो जाती हैं। इसलिए लागतों के साथ प्रयोक्ता प्रभारों को जोड़ देने की स्पष्ट आवश्यकता है। सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली विभिन्न प्रकार की निजी सेवाओं के लिए प्रयोक्ता प्रभारों के निर्धारण का पर्यवेक्षण एक स्वायत्त विनियामक आयोग द्वारा किया जाना चाहिए जिससे उपभोक्ता के हितों और सरकार के राजस्व दोनों की सुरक्षा हो सके।

सरकारी वेतन

4.63 कई राज्यों ने आयोग को यह अभ्यावेदन दिया है कि वेतन एवं भत्ते केन्द्र सरकार की व्यवस्था के अनुरुप होने की ओर अभिमुख है, और इसी वजह से केन्द्र सरकार से हटकर एक भिन्न वेतन संरचना का कार्यान्वयन करने में उन्हें मुश्किल हो रही है। कुछ राज्यों के लिए ये समस्याएं अत्यंत कठिन बन गयी है क्योंकि उनके कुल व्यय में वेतनों का बहुत बड़ा भाग है। राज्यों के लिए प्रारंभ की स्थितियां भिन्न थीं क्योंकि विगत में उनके वेतनमान केन्द्र से भिन्न थे तथा वे विभिन्न नियुक्ति संबंधी नीतियों का पालन कर रहे थे। यदि सभी राज्यों की वेतन संरचना को समनुरुप बना दिया जाए तो एक राज्य में कार्यरत कर्मचारियों की संख्या भी जनसंख्या के आकार, राजकोषीय क्षमता, और अन्य संगत विचारों से संबंधित कुछ तुलनीय मानदंडों के अनुरुप रखने की आवश्यकता है। ऐसा होने पर भी कार्यबल के गठन के कारण प्रति कर्मचारी वेतन व्यय भिन्न हो सकता है। उनकी राजकोषीय क्षमताओं की अपेक्षा में प्रसामान्यीकरण किया जा सकता है। वेतन का बोझ पहले से ही अधिक है और कम से कम ब्याज भुगतानों और पेंशन को घटाकर राजस्व व्यय के प्रति वेतन के अनुपात को बढ़ने नहीं दिया जाना चाहिए। इसे लगातार वर्ष 1996-97 के प्रचलित स्तरों तक लाया जाय। परिशिष्ट 4.2 रोजगार के सापेक्ष में प्रोफाइल और सरकार के वेतन बिलों पर चर्चा को दर्शाता है। यह देखा जा सकता है कि ब्याज भुगतानों और पेंशन को छोड़कर राजस्व व्यय की तुलना में वेतनों पर व्यय वर्ष 1996-97 में 35 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 1999-2000 में 42 प्रतिशत हो गया। ईएफसी ने यह सिफारिश की थी कि 10 वर्षों के अंतराल में एक नित्यक्रम के रूप में वेतन आयोग की नियुक्ति करने की आवश्यकता नहीं है। आयोग ने यह सिफारिश भी की है कि एक नये वेतन आयोग की नियुक्ति करते समय राज्यों को परामर्श लेना चाहिए। हम इन सिफारिशों से सहमत हैं।

पेंशन सुधार

4.64 पेंशन भुगतान, केन्द्र तथा राज्य बजटों के वचनबद्ध व्यय का प्रमुख संघटक है। केन्द्र सरकार ने पेंशन सुधारों के लिए विशेषतः भर्ती होने वाले नये कर्मचारियों के संबंध में कई कदम उठाए हैं। केन्द्र सरकार ने 1 जनवरी, 2004 से, इसी तारीख को अथवा बाद में भर्ती होने वाले नये केन्द्र सरकारी कर्मचारियों (प्रथम चरण में, सशस्त्र बलों को छोड़कर) के लिए मौजूदा परिभाषित लाभ पेंशन प्रणाली के स्थान पर एक परिभाषित

अंशदान पेंशन योजना आरंभ की है। केन्द्र सरकार ने एक स्वतंत्र पेंशन विनियामक प्राधिकरण की नियुक्ति हेतु विधान लाने के लिए एक प्रक्रिया भी शुरु की है, जो पेंशन निधियों के उचित निवेश को सुनिश्चित कर सकता है। पेंशन निधियों को विनियमित करने, उनमें वृद्धि करने और उसकी क्रमबद्ध वृद्धि को सुनिश्चित करने का उत्तरदायित्व पेंशन निधि विनियामक पर होगा। राज्यों के मामले में पेंशन देयताएं उनकी राजस्व प्राप्तियों का बहुत बड़ा हिस्सा हैं। यह हिस्सा आगे बढ़ती हुई आयु और साठ के अंत में और सत्तर की शुरुआत में हुई नियुक्तियों की संख्या को देखते हुए और अधिक बढ़ सकता है, जब राज्य सरकारों का आकार में विस्तार किया जा रहा था। पेंशन सुधारों के लिए राज्य सरकारों को भी केन्द्र सरकार के समान पहलों की शुरुआत करने की आवश्यकता है। यह भी विनियामक की नियुक्ति करने से सरल हो जाएगा।

अनुत्पादक से लेकर उत्पादक पूंजी व्यय तक

4.65 प्रस्तावित पुनर्संरचना योजना में जीडीपी के सापेक्ष में केन्द्र तथा राज्यों के सम्मिलित लेखे में पूंजी व्यय का स्तर वर्ष 2009-10 तक जीडीपी के 7 प्रतिशत तक बढ़ने की संभावना है। हमने संकेत दिया है कि यह पूंजी व्यय प्रशासनिक विभागों और विभागीय उद्यमों के संबंध में है। गैर-विभागीय उद्यमों के लिए पृथक ऋण सीमाओं का निर्धारण किया गया है। पूंजी व्यय में वृद्धि सार्वजनिक रूप से प्रदान की जाने वाली अनेक सेवाओं के लिए निवेश और भौतिक परिसंपत्तियों के निर्माण को बढ़ाने के लिए है जो केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा प्रदान की जाने वाली अनेक सेवाओं की वृद्धि को बढ़ाने और इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने पर केन्द्रित है। यह गैर-विभागीय सरकारी उद्यमों को उनके शेयर पूंजी में अंशदान करते हुए हानियों को पूरा करने अथवा बजट-भिन्न ऋणों से होने वाले शोधन ऋण के लिए नहीं है।

राजकोषीय अंतरण प्रणाली की पुनर्संरचना

4.66 केन्द्र से राज्यों को राजकोषीय अंतरण वित्त आयोग, योजना आयोग और केन्द्रीय मंत्रालयों के माध्यम से होता है। राजकोषीय अंतरण की समग्र प्रणाली अनेक अपर्याप्तताओं और कमियों से पीड़ित है जो अंतरणों तथा अंतरणों के प्रत्येक खंड के अन्दर खंडीकरण के कारण उत्पन्न होती है। हम अंतरणों के विभिन्न चैनलों के संबंध में सुधारों की एक योजना की सिफारिश करते हैं जिसे एक समयावधि के भीतर कार्यान्वित किया जा सकता है।

क. वित्त आयोग अंतरण

4.67 अंतरणों की प्रणाली समकरण द्वारा मार्गदर्शित होनी चाहिए, जो इक्विटी तथा क्षमता के अनुकूल हों। कुछ हद तक मानकीय दृष्टिकोण का उपयोग सूचना अन्तरालों के कारण बाधित होता है। जनसंख्या के आंकड़े वर्ष 1971 से संबंधित हैं। जब तक इस आयोग की सिफारिश की अवधि पूरी हो जाएगी यह लगभग 39 वर्ष पुराना हो जाएगा। यहां तक कि जीएसडीपी के आंकडे जोकि राजस्व आधार के संकेतक के रूप में कार्य करता हैं वर्ष 2009-10 तक करीब 8 वर्ष पुराने हो जाएंगे। ऐसे संदर्भ में जहां असमानताएं बढ़ती जाती हैं, वहां प्रयोग की जाने वाले आंकडों के संबंध में एक समकरण दृष्टिकोण के तहत अंतरण प्रगामी तौर पर डिजाइन किया जाता है तो भी वास्तविक अंतरण होने के समय तक अंतरण प्रणाली प्रतिगामी हो सकती है। वर्ष 1971 में जब सभी राज्यों की जनसंख्या लगभग 54 करोड़ थीं, जनसंख्या जनगणना आंकड़ों की प्रासंगिकता को लेना कठिन है, जबकि वर्ष 2001 की जनगणना में सभी राज्यों की जनसंख्या 100 करोड़ से भी अधिक थी। यह लगभग 100 प्रतिशत अप्रचलित है। हम यह मानते है कि अन्तर्निहित उद्देश्य ऐसे राज्यों को दंडित करने के होने चाहिएं जिन्होंने जनसंख्या वृद्धि नियंत्रण में तुलनात्मक आधार पर अच्छा कार्य नहीं किया है। लेकिन जनसंख्या में वृद्धि जन्मदर, मृत्युदर और निवल प्रवसन का परिणाम है। यह बेहतर होगा कि टीओआर में उद्देश्यों को बतला दिया जाए और उन सिद्धान्तों जिनके आधार पर अंतरण तंत्र कार्यान्वित किया जाता है, का निर्णय वित्त आयोग पर, छोड़ दिया जाए। सूचना अन्तराल की समस्या से अंततः तब छुटकारा होगा जब वित्त आयोग अंतरणों के नियम और भार, जो कि 5 वर्षों के लिए हैं को निर्धारित करेगा, लेकिन वास्तविक हिस्से का प्रत्येक वर्ष के अद्यतन आंकड़ों का प्रयोग करते हुए अद्यतन किया जाए। यह 5 वर्षीय समीक्षा और वार्षिकी अद्यतनों की ऐसी पद्धति है जो ऑस्ट्रेलिया में भी लागू है। वित्त आयोग अंतरणों से संबंधित मुख्य आशंकाओं के संबंध में पहले के अध्याय में विस्तार से चर्चा की गई है।

ख. योजना आयोग अंतरण

4.68 योजना सहायता के मामले में अनुदानों और ऋणों के बीच का अनुपात जो सामान्य श्रेणी के राज्यों के लिए 30:70 और विशेष श्रेणी के राज्यों के लिए 10:90 जिसमें राज्यों को योजना ऋणों पर केन्द्र सरकार द्वारा भारित ब्याज दर में का पूरक है, जो विगत में कभी कभी 300 से 400 आधार बिन्दु पर रहा है और ये केन्द्र को निधियों की लागत से कहीं अधिक है। दूसरे शब्दों में, योजना अनुदान वास्तव में ब्याज-मुक्त अनुदान नहीं है। काफी समय से ये सब उच्चतर ब्याज प्राप्तियों के रूप में वसूल किये जाते है। योजना अनुदानों को असल अनुदानों के रूप में दिया जाए तथा राज्यों को बाजार से सीधा उधार लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। ऐसे एक परिवर्तन के लिए योजना सहायता में अनुदानों को ऋणों से अलग रखने की आवश्यकता होगी। इससे आवश्यकताओं के अनुसार अनुदानों का और क्षमताओं के अनुसार ऋणों का निर्धारण करने में सुविधा होगी। प्रत्येक राज्य के योजना आकार में वहनीय ऋण स्तर और बाजार से उधार लेने की क्षमता को ध्यान में रखे जाने की आवश्यकता है।

4.69 एक पुनर्संरचना योजना में योजना प्रक्रिया से संबंधित सुधारों को अवश्य शामिल किया जाना चाहिए। व्यय की संरचना में विषमताओं का भाग योजना और योजना-भिन्न व्यय के बीच भिन्नता के कारण उत्पन्न होता है। पहले से ही सृजित परिसंपत्तियों के अनुरक्षण का त्याग करते समय नई परिसम्पत्तियों के सृजन की प्रमुखता अथवा योजना का भाग होने के कारण नयी स्कीमों की शुरुआत को दर्शाना अदक्षता है। इसके परिणामस्वरुप, एक ओर ऐसी कई अपूर्ण परियोजनाएं/योजनाएं रह जाती हैं जिससे

कोई लाभ नहीं मिल पा रहा है और दूसरी ओर, खराब रख-रखाव तथा तेजी से ह्रासमान होने वाली परिसंपत्तियां रह जाती हैं। काफी समय से आयोजनाएँ परियोजना-केन्द्रित होने के बजाय योजना-केन्द्रित हो गयी हैं जिस कारण ऐसी परिसम्पत्तियां जो आयोजनागत व्यय के वित्त प्रबंध हेतु उपयोग किए गए ऋण के शोधन हेतु प्रतिफल प्रदान कर सकती हैं, न तो सृजित की जाती है और न ही उनका रख-रखाव किया जाता है।

4.70 केन्द्रीय तौर पर प्रायोजित योजनाओं के मामले में केवल अनुदान घटक होना चाहिए तथा अनुदानों के साथ ऋणों को संबद्ध नहीं करना चाहिए। राज्य को उसके अनुदानों की पूरी हकदारी दी जानी चाहिए तथा उसे विभिन्न मंत्रालयों द्वारा चलाई जा रही केन्द्रीय प्रायोजित (सीएस) योजनाओं में से, कुल अनुदान की सीमा के भीतर, अपना विकल्प चुनने की अनुमति दी जानी चाहिए। इस प्रकार सीएस योजनाओं के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगेगी और मंत्रालय पर ऐसी परियोजनाएं तैयार करने का दबाव होगा जिनकी मांग अधिक होगी। यह मौजूदा आपूर्ति-प्रेरित दृष्टिकोण के जरिए दूर होगा जहाँ योजनाएं बड़ी संख्या, प्रतिरुपता और मानिटरिंग की कमी द्वारा श्रेणीबद्ध की जाती हैं। सीएस योजनाएं अनेक समितियों द्वारा अध्ययन का विषय रही हैं। सामान्य सर्वसम्मति इनकी संख्या में कमी कराने के प्रति रही है, लेकिन उसके लिए अनुवर्ती कार्रवाई मन्द रही है।

ऋण पुनर्सरचना

4.71 वर्ष 2002-03 में केन्द्र सरकार ने एक ऋण अदला-बदली योजना आरंभ की ताकि राज्य सरकारों को मौजूदा लघु बचत अंतरण के भाग और अतिरिक्त बाजार उधारों के साथ भारत सरकार को देय अपने उच्च लागत वाले ऋणों की अदला-बदली करने में सुविधा हो। वर्ष 2002-03 के दौरान राज्य सरकारों ने 20 प्रतिशत लघु बचत शेयर और अतिरिक्त बाजार उधारों सहित 13766 करोड़ रुपए की अदला-बदली की। वर्ष 2003-04 के दौरान अंनतिम आँकड़ों के अनुसार 46211 करोड़ रुपए की राशि के ऋणों का 30 प्रतिशत लघु बचत अंतरणों और अतिरिक्त बाजार उधारों के साथ अदला-बदली की गई है। केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय लघु बचत निधि (एनएसएसएफ) को अपनी देयताओं के पुनर्भुगतान के लिए ऋण अदला-बदली योजना के तहत प्राप्तियों का प्रयोग किया है। यह केन्द्र सरकार के समग्र ऋण तथा उसके साथ प्रभावी ब्याज दर को कम कराने में प्रभावी रहा है। वर्ष 2004-05 के दौरान 43887 करोड़ रुपए की अतिरिक्त राशि ऋण अदला-बदली के लिए परिकल्पित की गई है।

4.72 वर्ष 2004-05 के प्राप्ति बजट के अनुसार भारत सरकार की कुल देयताएं 1985866 करोड़ रुपए दर्शाई गई हैं। इसमें राज्य सरकारों को ऋणों के प्रति राष्ट्रीय लघु बचत निधि (एनएसएसएफ) के सरकारी लेखे में देयताएँ और 60,000 करोड़ रुपए मूल्य की बाजार स्थिरीकरण योजना शामिल है। बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) निधियाँ मौजूदा व्यय के लिए सरकार को उपलब्ध नहीं हैं और ये भारतीय रिजर्व बैंक के पास नकदी रूप में रहती हैं। एनएसएसएफ के तहत ऋण लेने के एवज़ में में राज्यों ने विशेष प्रतिभूतियाँ जारी की हैं। इन दो राशियों को परिसंपत्ति की तरफ से समायोजित करने के लिए वर्ष 2004-05 के अंत में केन्द्र सरकार की बकाया देयताएँ सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का लगभग 53 प्रतिशत होनी अनुमानित हैं। राज्यों के लिए ऋण अदला-बदली कार्यक्रम पर आधारित एनएसएसएफ को जारी की गई विशेष प्रतिभूतियों के शोधन के कारण जीडीपी के सापेक्ष में केन्द्र सरकार की देयताओं में गिरावट हुई है।

4.73 उसी प्रकार, केन्द्र सरकार को राज्यों द्वारा उधार लेने में अपनी मध्यस्थता चरणबद्ध रूप से समाप्त कर देनी चाहिए। जहाँ आवश्यक हों, एक लोक लेखे के माध्यम से इसकी देख-रेख की जाय। तथापि, लघु बचत और राज्यों के लोक लेखे और प्रारक्षित निधियों सहित सभी स्रोतों से उधार को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक राज्य के लिए उधार की सीमाएँ निर्धारित करने की आवश्यकता है। हमारी पुनर्सरचना योजना में राज्यों के समग्र राजकोषीय घाटे पर उल्लिखित उधार की सीमा 3 प्रतिशत है। उनके मामलों में भी वर्ष 2008-09 तक राजस्व घाटा शून्य तक लाया जाये। एक बार स्थिरीकरण हो जाने के बाद घाटे संबंधी इन नियमों को चक्रीय पेटर्न को ध्यान में रखते हुए कुछ परिवर्तनों के साथ मध्यावधि में लागू किया जाये।

4.74 राज्यों के लिए हमारे द्वारा सुझाए गये ऋण पुनर्सरंचना कार्यक्रम में जैसा कि अध्याय 12 में बताया गया है, दो संघटक हैंः 7.5 प्रतिशत की ब्याज दर पर वर्ष 2004-05 के अंत में केन्द्र के बकाया शेष में सभी राज्य ऋणों का समेकन जिनका 20 वर्षों में पुनर्भुगतान किया जाना है और राजस्व घाटों में कमी करने की उपलब्धि से संबद्ध एक ऋण राहत योजना। हम यह प्रस्ताव करते हैं कि इस योजना का लाभ उठाने के लिए एक पूर्वशर्त के रूप में सभी राज्यों को उत्तरदायित्व विधान बनाना चाहिए, जिसमें अधिक से अधिक वर्ष 2008-09 तक सभी राज्यों को राजस्व घाटा दूर करने का प्रावधान हो, राजकोषीय और राजस्व घाटों में कमी करने के लिए वार्षिक लक्ष्यों का प्रावधान शामिल हो, और संबंधित कानूनों में अपने बजट के साथ-साथ एक समेकित वृद्धि एवं राजकोषीय प्रणाली विवरण प्रस्तुत हों। जैसाकि राज्यों की उधारों के लिए बाजार में पहुंच बढ़ रही हैं उनकी राजकोषीय स्थिति का बाजारों द्वारा अधिकाधिक मूल्यांकन किया जाएगा। वे अतिरिक्त जोखिम को पूरा करने के लिए औसत ब्याज दरों से अधिक ब्याज देने के लिए मजबूर हो सकते हैं यदि बाजार मूल्यांकन द्वारा लोक वित्त को अधिक संतुलित न दिखाया जाता हो। इसलिए, राजकोषीय सुधार के लिए हम दो तंत्रों पर निर्भर हैंः राजकोषीय उत्तरदायित्व अधिनियम के तहत स्व-मूल्यांकन और बाजार में प्रस्तुतीकरण। हमारी दृष्टि में ये सब राज्यों की स्वायत्तता के साथ समझौता किए बिना ही राजकोषीय अनुशासन के लिए प्रभावी साधन सिद्ध होंगे।

सार्वजनिक क्षेत्र सुधार

4.75 जैसाकि ग्यारहवें वित्त आयोग द्वारा संकेत दिया गया है पूंजी की एक बड़ी राशि सरकारी क्षेत्र में अवरुद्ध हो जाती हैं जो सरकार की निधियों की औसत लागत के संदर्भ में बहुत कम प्राप्तियों को दर्शाती है। उपलब्ध सूचना के अनुसार 109 केन्द्रीय सरकारी (पब्लिक) क्षेत्र की कंपनियाँ घाटे में चल रही थीं। यह समस्या विशेषतः राज्यों के मामले में अधिक तीव्र है। राज्य स्तर

के 1003 सरकारी उद्यम "एसएलपीई" या तो कार्य नहीं कर रहे हैं या घाटे में चल रहे हैं। केवल सरकारी निवेश पर प्राप्तियाँ अप्रचलित अथवा कम नहीं, बल्कि बड़ी संख्या में एसएलपीई अपने लेखों को अंतिम रूप देने में असमर्थ भी हैं। उन एसएलपीई के संबंध में निवेश की कुल राशि जहाँ लेखों को अंतिम रूप दिया गया था, वर्ष 2000-01 के अंत में 2,38,220 करोड़ रुपए होना अनुमानित था। तथापि, अनेक राज्यों ने कुछ एसएलपीई को बन्द करने और अन्यों में विनिवेश के लिए कदम उठाए हैं। इस प्रक्रिया को और अधिक मजबूत किया जाना चाहिए। पुनर्संरचना की अवधि अर्थात् 2005-10 में राज्य सरकारों को एक ऐसा कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, जिसमें लगभग सभी घाटे में चल रहे एसएलपीई को बंद करना शामिल है। राज्य विद्युत बोर्डों और परिवहन उद्यमों से संबंधित सुधार पृथक रूप से किए जा रहे हैं। वर्ष 2009-10 के अंत तक राज्यों के पास एसएलपीई के लघु लेकिन व्यवहार्य समूह होने चाहिए।

सुधारों के लिए राजकोषीय ढाँचा

4.76 नब्बे के दशकों में, विश्व के अधिकतर देश राजकोषीय सुदृढ़ता को प्राप्त करने, प्राथमिक अधिशेषों को प्राप्त करने में सक्षम थे। ऋण सीमाएं और घाटा, लक्ष्य सहित व्यापक सुधारों ने राजकोषीय रूपरेखा ढांचा को मजबूत बनाया है। व्यय नियमावली और राजकोषीय प्रबंधन में पारदर्शिता से भी इन राजकोषीय रूपरेखाओं को बल मिला है। इन राजकोषीय सुदृढ़ता प्रयासों [15] के मूल्यांकन से कतिपय कार्यों की पहचान की गई है जो विश्वसनीय और स्थायी समायोजनों के लिए कार्य करते हैं। तदनुसार, व्यय में कमी पर आधारित राजकोषीय सुदृढ़ता के अधिक सफल होने की संभावना है, विशेषतः तब जब ऋण के उच्च स्तरों वाले देशों द्वारा अपनाई जाती हो। व्यापक सुधारों के राजकोषीय ढांचें में राजकोषीय सुदृढ़ता प्राप्त करने तथा उसके अनुरक्षण करने पर लक्षित संस्थागत सुधारों की अपेक्षा है, जिसमें राजकोषीय नीति के लिए स्वतः चालित स्थायीकारियों और नीतिगत कार्रवाईयों के जरिए कारोबारी चक्रों से निपटने की गुंजाइश हो।

4.77 हाल ही के संस्थागत सुधारों को तीन बड़े समूहों में विभाजित किया जा सकता है : औपचारिक घाटा और ऋण नियमावली, व्यय सीमाएँ और पारदर्शिता। इस दृष्टिकोण के लिए मुख्य उदाहरण वे यूरोपियन देश हैं जो स्थिरता एवं वृद्धि द्वारा आपूर्ति मास्ट्रिक्ट संधि से बंधे हैं। यू.के. ने वर्ष 1997 से एक गोल्डन नियम आरंभ किया है जिसके द्वारा उधार केवल पूंजीगत व्यय को वित्त पोषित करने के लिए दिया जाता है तथा निवल ऋण की सीमा एक चक्र में जीडीपी का 40 प्रतिशत है। कई देशों में उप राष्ट्रीय स्तर पर घाटा और ऋण संबंधी नियमावली मौजूद है। यूएस में दो को छोड़कर सभी राज्यों के पास ऐसे कानून हैं जिनमें राज्यों को ऋण जुटाने के लिए संतुलित बजट और ऋण सीमा की आवश्यकता होती है। कनाडा के नौ प्रांत और संघ राज्य क्षेत्रों के पास संतुलित बजट वाली राजकोषीय नियमावली है जिसमें केवल निवेश परियोजनाओं के वित्तपोषण के प्रयोजन हेतु ऋण लेने की अपेक्षा होती है। कनाडा ने एक कठोर व्यय समीक्षा प्रक्रिया शुरू करने पर ध्यान केन्द्रित किया है। ऋण सीमांकन घाटे संबंधी नियमावली के लिए एक सहायक कारक के रूप में कार्य कर सकता है। व्यवहार में ऋण सीमाएँ सिद्धांत पर आधारित परिकलनों द्वारा नही चलती रही हैं, बल्कि उच्च ऋण स्तरों को कम करने के उद्देश्य द्वारा चलती है और इसलिए सामान्य तौर पर इसे प्रत्येक देश के अनुभव के आधार पर चुना जाता है। सामान्य रूप से घाटा संबंधी नियमावली और विशेष रूप में संतुलित बजट की मुख्य आलोचना यह है कि वे अपरिवर्तनीय हैं और इसलिए पूर्व-चक्रीय की ओर उन्मुख हैं। यह उप-राष्ट्रीय सरकारों के साथ तुलना करते समय राष्ट्रीय सरकारों के लिए अधिक महत्वपूर्ण विषय है। इस कारण राष्ट्रीय सरकार में घाटा नियमावली को अधिकांशत चक्रीय रूप से समायोजित घाटा उपायों अथवा आर्थिक चक्र की अपेक्षा एक औसत के रूप में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार यह नियमावली घरेलू स्थायीकारियों के चालन की अनुमति देती है और एक हद तक चक्र के भीतर विवेकाधीन नीति के लिए गुंजाइश भी प्रदान करती है।

4.78 न्यूजीलैंड, ऑस्ट्रेलिया और यू.के. जैसे देशों ने राजकोषीय प्रबंधन में पारदर्शिता पर बल दिया है। इस दृष्टिकोण के मुख्य घटक हैः अप्रत्यक्ष कानूनी आधार, राजकोषीय नीति के मार्गनिर्देशक सिद्धान्तों का विस्तार करना, उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने की अपेक्षा, राजकोषीय नीति पर दीर्घावधि सकेन्द्रण की आवश्यकता पर बल देना और जनता को राजकोषीय संबधी सूचना देना। यू.के., यू.एस. और न्यूजीलैंड ने पारदर्शिता के लिए कानून आरंभ किए हैं, जिनमें घाटों और ऋणों के लिए उद्देश्य प्रदान करने वाले विवरण की अपेक्षा है। यू.एस, व्यय और घाटा संबंधी नियमावली पर अपेक्षाकृत अधिक महत्व देता है। व्यय संबंधी नियमावली मुख्य रूप से व्यय के विशेष क्षेत्रों जैसे गैर-विवेकपूर्ण व्यय के विपरीत विवेकपूर्ण व्यय की सीमा और विशेष कार्यक्रमों के संबंध में कुछ मामलों पर बल देती है। इस प्रकार तीन संरचनात्मक परिवर्तन भारत में राजकोषीय स्थिति को पुनः चालू करने में सहायता कर सकते हैं नामतः (i) ऐसे कानून अधिनियमित करना जो राजकोषीय असावधानियों पर रोक लगा सकें और राजकोषीय तथा राजस्व घाटों के संबंध में लक्ष्य तय कर सकें और जिसमें विशिष्ट शर्तों के अधीन व्यय संबंधी कटौतियों के लिए नियम हो। (ii) राजकोषीय प्रबंधन में ऐसी पारदर्शिता अपेक्षाएं हो, जिससे सरकार की राजकोषीय स्थिति को अच्छी तरह समझने में उसके नागरिकों और उसके प्रतिनिधियों को सहायता प्राप्त हो और (iii) बाजार अनुशासन, विशेषतः ऋण जुटाने के प्रति उन का अधिक संपर्क हो।

सारांश

4.79 पुनर्संरचना संबंधी हमारे दृष्टिकोण में केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित एवं समन्वित प्रयासों की अपेक्षा है। यह एक मध्यावधि परिप्रेक्ष्य के साथ बृहत्त आर्थिक ढांचे में राजकोषीय सुधारों पर बल देता है। यह इस दृष्टिकोण का समर्थन करता है कि कराधान और राजकोषीय रूपरेखा में अधिकाधिक परिवर्तन वर्ष 2005-06 तक पूरे होने चाहिए तथा इस प्रक्रिया में सुधार तिमाही और वार्षिक समीक्षाओं के आधार पर किये जाने चाहिए। हमने जिस राजकोषीय पुनर्संरचना की मुख्य प्रणाली की सिफारिश

की है वह वृद्धि दर की प्रवृत्ति को बढ़ाने पर केन्द्रित है। ऐसा बचत दर में वृद्धि करते हुए किया जा सकता है, जिसके लिए सरकार के अधिव्ययों में भारी कमी करने की अपेक्षा है। इसके लिए कम से कम सरकार के दोनों ही स्तरों पर राजस्व घाटे को दूर करने की अपेक्षा है। तथापि, हम आधारभूत ढांचे पर लक्षित सरकार के निवेश में वृद्धि करने की सिफारिश करते हैं। हमने जो विशेष सुझाव दिये हैं, वे नीचे संक्षिप्त रूप में दिये गये हैं :

(i) सुझायी गई सुधार प्रणाली सरकारी क्षेत्र की बचत और जीडीपी की तुलना में सरकार की पूंजी व्ययों को बढ़ाते हुए वृद्धि को मजबूत बनाने पर केन्द्रित होनी चाहिए। इसके लिए राजकोषीय घाटे में राजस्व घाटे का भाग कम करने की अपेक्षा है, जिससे वह स्वतः कम हो जायेगा।

(ii) बृहत आर्थिक परिदृश्य जो राजकोषीय सुधारों के लिए रूपरेखा का कार्य करता है, में औसतन वास्तविक वृद्धि 7 प्रतिशत और मुद्रास्फीति दर 5 प्रतिशत है।

(iii) वर्ष 2009-10 तक राजकोषीय सुधार में वृद्धि की अपेक्षा है, जिसमें संयुक्त कर-जीडीपी दर 17.6 प्रतिशत, प्राथमिक व्यय जीडीपी के 22 प्रतिशत के स्तर पर और पूंजीव्यय जीडीपी के लगभग 7 प्रतिशत तक हो।

(iv) ऋण और राजकोषीय घाटे के संदर्भ में, राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम (एफआरबीएम) के लक्ष्यों और संबंधित महत्वपूर्ण अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह विचार है कि :

    (क) जीडीपी के 6 प्रतिशत का संयुक्त राजकोषीय घाटा और प्रतिवर्ष 12 प्रतिशत की मामूली वृद्धि दर के साथ यह प्रणाली 56 प्रतिशत की संयुक्त ऋण जीडीपी दर की ओर अभिमुख होगी। मौजूदा स्तर पारंपरिक विनिमय दरों पर आकलित विदेशी ऋण सहित जीडीपी 81 प्रतिशत के उच्च स्तर पर होना अनुमानित है। वर्ष 2009-10 के अंत तक इसे कम से कम 75 प्रतिशत तक लाया जाना चाहिए।

    (ख) कुछ समय से आगे उधार लेने की प्रक्रिया को समाप्त किया जा रहा है, ऋण-जीडीपी के लिए दीर्घावधि लक्ष्य केन्द्र तथा राज्य के लिए प्रत्येक का 28 प्रतिशत होना चाहिए। उनका जीडीपी की दर की तुलना में राजकोषीय घाटे के लक्ष्यों को प्रत्येक जीडीपी के 3 प्रतिशत पर नियत करना चाहिए। दोनों ही मामलों में, वर्ष 2008-09 तक राजस्व घाटे को दूर करना चाहिए।

    (ग) जीडीपी दरों की तुलना में राजस्व के अनुमानों के तहत अंततः वर्ष 2009-10 तक केन्द्र की राजस्व प्राप्तियों के सापेक्ष में ब्याज भुगतान लगभग 28 प्रतिशत तक पहुंच जाएगा। राज्यों के मामले में राजस्व प्राप्तियों के सापेक्ष में ब्याज भुगतानों का स्तर वर्ष 2009-10 तक करीब 15 प्रतिशत तक कम होगा।

(v) प्रस्तावित राजकोषीय समायोजन के भाग के रूप में केन्द्र तथा राज्यों के लिए जीडीपी के सापेक्ष में राजस्व घाटा, उनके संयुक्त तथा वैयक्तिक खातों को वर्ष 2008-09 तक शून्य के स्तर पर कम कराना चाहिए। केन्द्र के राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं और बजट प्रबंधन अधिनियम में पहले से ही ऐसा प्रावधान है।

(vi) राज्यों को भर्ती एवं मजदूरी नीति का पालन करना चाहिए, वह भी इस तरीके से कि ब्याज भुगतानों और पेंशन को घटाकर राजस्व व्यय के सापेक्ष में कुल वेतन बिल 55 प्रतिशत से अधिक न हो।

(vii) हम यह सिफारिश करते हैं कि प्रत्येक राज्य को एक राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान प्रांरभ कर देना चाहिए। इसे ऋण-राहत योजना का लाभ उठाने के लिए एक पूर्व शर्त के रूप में निर्धारित किया गया है, जैसाकि हमने एक दूसरे अध्याय में सिफारिश की हैं। इस विधान में कम से कम निम्नलिखित शामिल होने चाहिएं :

(क) वर्ष 2008-09 तक राजस्व घाटे का उन्मूलन;

(ख) राजकोषीय घाटा जीएसडीपी के 3 प्रतिशत तक कम करना अथवा उसके समतुल्य जिसे राजस्व प्राप्तियों की तुलना मे ब्याज भुगतानों की दर के रूप में परिभाषित किया है;

(ग) राजस्व और राजकोषीय घाटों को वार्षिक कमी के लक्ष्यों तक लाना;

(घ) राज्य अर्थव्यवस्था और संबंधित राजकोषीय प्रणाली के लिए संभावनाएं दर्शाने वाली वार्षिक विवरणी का प्रकाशन करना ।

(ङ) बजट के साथ-साथ सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र और सहायता प्राप्त संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों की संख्या और संबंधित वेतनों का ब्यौरा देने वाली विशेष विवरणियों का प्रकाशन ।

अंतिम टिप्पणियां

(1) इसमें परम्परागत विनिमय दरों पर मूल्यांकित विदेशी ऋण शामिल हैं।

(2) भारतीय रिजर्व बैंक, मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट. 2000-01 पृष्ठ सं. iv-12 से 14 ।

(3) भारतीय रिजर्व बैंक (ओप.सिट.) द्वारा लगाए गए अनुमान के अनुसार नब्बे के दशक के दौरान चक्रीय घाटा स.घ.उ. के 0.12 प्रतिशत के घाटे और स.घ.उ. के 0.21 प्रतिशत अधिशेषों के बीच में रहा है। हाल के वर्षों में संरचनात्मक राजकोषीय घाटा स.घ.उ. के लगभग 10 प्रतिशत की रेंज में रहा है।

जैसा कि (2) में है।

(4) हम, यथार्थ रूप में उत्पादन की प्रवृत्ति तथा मूल्य स्फीतिकारक की जानकारी के लिए हाडरिक-प्रेसकोट (एचपी) फिल्टर

का प्रयोग करते हैं। माना कि श्रृंखला वाई है तो एचपी फिल्टर, वाई के बराबर एस का परिकलन एस के दूसरे अन्तर को बाधित करने वाली पेनल्टी के अधीन एस के आस-पास वाई के अन्तर को न्यूनतम करते हुए करता है। पेनल्टी पैरामीटर एस श्रृंखला को समानता को नियंत्रित करता है। पेनल्टी पैरामीटर जितना बढ़ा होगा श्रृंखला उतनी ही समान होगी। पैरामीटर का प्रतिमान बहुत अधिक होने से श्रृंखलाएं रेखाकार हो जाती हैं। हमने इस पैरामीटर के लिए 100 के मान का प्रयोग किया है जिसकी समान्यतया वार्षिक श्रृंखलाओं के मामले में सिफारिश की जाती है।

(5) आहलुवालिया ने अपने लेख "सुधार-पश्च अवधि में राज्यों का आर्थिक निष्पादन" (ईपीडब्लयू, 2000) में, यह मानते हुए कि किसी एक राज्य की जनसंख्या उस राज्य की औसत आय पर केन्द्रित होती है गिनी गुणांक के अनुमानों के प्रतिपादन के लिए आवश्यक अर्हताओं का उल्लेख किया है।

(6) डा. सीता प्रभु और यूएन डीपी के भारत स्थित कार्यालयों में उनके सहयोगियों द्वारा तैयार ।

(7) वित्त आयोग के हित के लिए दिल्ली स्कूल ऑफ इकनोमिक्स के प्रो. टी.सी. अनन्त और आईडीएफसी के श्री निर्मल मोहन्ती द्वारा तैयार ।

(8) अलग-अलग समायवधियों में ऋण की गति को वर्णित करने वाले समीकरण का मानक विर्निदेशन इस समीकरण (1) के रूप में दिया गया है [(बी$_{\text{टी}}$ = पी$_{\text{टी}}$ +बी$_{\text{टी}}$ -1 (1+ 1$_{\text{टी}}$)/(1 + जी$_{\text{टी}}$)] । जैसाकि रंगाराजन और श्रीवास्तव (2004, के लेख में चर्चा की गई है जेड$_{\text{टी}}$ =बी$_{\text{टी}}$ - बी$_{\text{टी-1}}$ समीकरण 1 को इस प्रकार भी लिखा जा सकता है ।

जेड$_{\text{टी}}$ =पी$_{\text{टी}}$ - बी$_{\text{टी-1}}$ [(जी$_{\text{टी}}$ - आई$_{\text{टी}}$) (1 +जी$_{\text{टी}}$)-1]

अथवा पी$_{\text{टी}}$= जेड$_{\text{टी}}$ = +बी$_{\text{टी-1}}$ [(जी$_{\text{टी}}$-आई$_{\text{टी}}$) (1 +जी$_{\text{टी}}$)-1] किन्हों भी दो बैंचमार्क वर्षों को 1 और टी मानते हुए

{पी$_{\text{टी}}$= {जेड$_{\text{टी}}$ +{बी$_{\text{टी}}$ +बी$_{\text{टी-1}}$ [(जी$_{\text{टी}}$-आई$_{\text{टी}}$)(1 +जी$_{\text{टी}}$)-1] (टी 1, ...टी)

पद ए1 ={जेड$_{\text{टी}}$ /{पीटी (टी = 1, ...टी)

उस मात्रा को दर्शाती है जिसमें संचित प्राथमिक घाटे ऋण संचयन में परिवर्तित किए जाते हैं। दूसरी ओर, पद

ए 2 ={बी$_{\text{टी-1}}$ [(जी$_{\text{टी}}$ - आई$_{\text{टी}}$)-1] /{पीटी (टी 1, ..टी)

उस मात्रा को दर्शाती है जिसमें संचित प्राथमिक घाटों को ब्याज दर से वृद्धि की अधिकता द्वारा खपाया जाता है।

(9) केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन के साथ किए गए विचार-विमर्श से इस बात की पुष्टि हो गई है कि सांख्यिकी संबंधी कुछ समायोजनों के अधीन प्रशासनिक विभागों और विभागीय उद्यमों की निवल बचतें और केन्द्र तथा राज्य सरकारों का सम्मिलित राजकोषीय घाटा बराबर है।

(10) मुहलीसेन (1997, स्टाफ कागज-पत्र) ने अनुमान लगाया है कि हर बार सरकारी बचत में 2 प्रतिशतांक की वृद्धि होने से प्राइवेट बचतों में 0.25 प्रतिशतांक की कमी होती है। यह संबंध विपरीत क्रम में भी होता है।

(11) माना डी =अवधि के अन्त में बकाया ऋण, वाई = बाजार मूल्यों पर स.घ.उ., जी = वृद्धि दर, आई$_{(1)}$ = प्रभावी ब्याज दर, पी = प्राथमिक घाटा, एफ = राजकोषीय घाटा और आई$_{(1)}$ = ब्याज भुगतान। सम्बद्ध अवधि को अधोलिखित टी द्वारा दर्शाया गया है। ऋण-स.घ.उ. अनुपात को बी द्वारा और स.घ.उ. के प्रति प्राथमिक घाटे को पी द्वारा दर्शाया गया है। इस प्रकार बी$_{\text{टी}}$ डी$_{\text{टी}}$ /वाई$_{\text{टी,}}$ और पी$_{\text{टी}}$ =पी$_{\text{टी}}$/वाई$_{\text{टी}}$ ।

परिभाषा के अनुसार

डी$_{\text{टी}}$ - डी$_{\text{टी-1}}$ = एफ$_{\text{टी}}$

अथवा डी$_{\text{टी}}$ - डी$_{\text{टी-1}}$ = पी$_{\text{टी+1 टी.}}$......................... (क)

हम इस तरह भी लिख सकते हैं :-

आई$_{\text{टी}}$ = आई$_{(1)}$डी$_{\text{टी-1,}}$ और वाई$_{\text{टी}}$ = वाई$_{\text{टी-1}}$ (1 +जी$_{\text{टी}}$)

(क) को वाई से भाग देने पर हमारे पास यह समीकरण होगाः

बी$_{\text{टी}}$-बी$_{\text{टी-1}}$ [1/(1 +जी$_{\text{टी}}$)]= पी$_{\text{टी}}$ + आई$_{\text{टी}}$ बी$_{\text{टी-1}}$[1/1+जी$_{\text{टी}}$)

अथवा बी$_{\text{टी}}$-पी$_{\text{टी-1}}$+ बी$_{\text{टी-1}}$[1-(1+ आई$_{\text{टी}}$)/ (1 +जी$_{\text{टी}}$)] ....(ख)

अथवा बी$_{\text{टी}}$-बी$_{\text{टी-1}}$ = पी$_{\text{टी}}$-बी$_{\text{टी-1}}$[1-(1+ आई$_{\text{टी}}$)/(1+जी$_{\text{टी}}$)]

अथवा बी$_{\text{टी}}$-बी$_{\text{टी-1}}$ = पी$_{\text{टी}}$-बी$_{\text{टी-1}}$[(जी$_{\text{टी}}$ + आई$_{\text{टी}}$)/(1 +जी$_{\text{टी}}$)] ....(ग)

इस प्रकार बी$_{\text{टी}}$=बी$_{\text{टी-1}}$ =बी* का दीर्घावधि संतुलन निम्नलिखित द्वारा प्रस्तुत किया गया है.. बी* =पी (1 +जी) / (जी - आई (i) ...(घ)

तदनुरूप = एफ* = पी.जी. / (जी-आई) .....(ङ)

इस प्रकार, आई(i) और जी के मानों को मानते हुए स.घ.उ. के प्रति प्राथमिक घाटों के अनुपात (पी) के किसी भी लक्षित स्तर के लिए स.घ.उ. के प्रति ऋण का स्थिर अनुपात (घ) द्वार दर्शाया गया और स.घ.उ. के प्रति तदनुरूप राजकोषीय घाटे का अनुपात जो यह सुनिश्चित करेगा कि एफ* वर्ष प्रति वर्ष स्थिर रहता है, (ङ) द्वारा दर्शाया गया है। (घ) और (ङ) से यह भी पता चलता है कि बी* और एफ* के बीच संबंध एफ*=बी* जी/(1+जी) द्वारा दर्शाया गया है।

....(च)

(12) राजस्व के प्रति ब्याज भुगतानों का अनुपात (आईपी$_{\text{टी}}$/आर आर$_{\text{टी}}$) नीचे दिए गए अनुसार प्राप्त किया जा सकता है :

आई पी$_{\text{टी}}$ = आई बी$_{\text{टी-1}}$ = आई बी$_{\text{टी-1}}$ वाई$_{\text{टी-1}}$

चूंकि ऋण स्थिर है बी$_{\text{टी}}$=बी$_{\text{टी-1}}$ बी* =आई पी$_{\text{टी}}$ = आई [पी (1+ जी)/(जी-आई] वाई$_{\text{टी-1}}$ अथवा आई, पी/(जी-आई] वाई$_{\text{टी}}$

(चूंकि वाई$_{\text{टी-1}}$ = वाई$_{\text{टी}}$ / (1 + जी)])

राजस्व प्राप्तियों को इस प्रकार लिखा जा सकता है :

आर आर$_{\text{टी}}$ = आर (r) वाई$_{\text{टी}}$

इस प्रकार (आई पी)*= आई पी$_{\text{टी}}$/ आर आर$_{\text{टी}}$ = आई पी/ आर(जी-आई(i)) अथवा पी/(जी-आई) =आई पी)* आर (आर)/ आई

इसके अलावा, स्थिरता के साथ, कि बी$_{\text{टी}}$ = बी$_{\text{टी-1}}$, यह दर्शाता है कि बी$_{\text{टी}}$ = बी$_{\text{टी-1}}$ = (1 + जी) हो जाता है।

फिर राजकोषीय घाटे को इस प्रकार लिखा जा सकता है।

एफ$_{\text{टी}}$ = बी$_{\text{टी-1}}$ जी

अथवा एफ$_{\text{टी}}$ = बी$_{\text{टी-1}}$ जी (1 + जी)

अथवा एफ* = बी$_{\text{टी}}$ जी / (1 + जी) = पी.जी. (जी.आई)

फिर हम ऐसा लिख सकते हैं :-

एफ*= (आई पी)*आर जी/आई का प्रयोग करते हुए (छ)

और बी* =(आई पी)* आर (1 + जी) / आई (ज)

तदनुसार, एफ*/बी* = जी/ (1 + जी)

(13) एक अध्ययन राष्ट्रीय सरकारी वित्त और नीति संस्थान द्वारा किया गया था जो दो राज्यों अर्थात् आन्ध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल पर केन्द्रित था। दूसरा अध्ययन सरकारी वित्त एंव नीति फाउण्डेशन द्वारा किया गया था जिसने कराधान में ऊर्ध्वमुखी वृद्धि के प्रश्न की जांच पड़ताल की।

(14) भारत सरकार ने वर्ष 1997 में भारत में सरकारी सब्सिडियों से संबंधित एक विवेचन पत्र प्रकाशित किया।

(15) विश्व आर्थिक दृष्टिकोण, 2001, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष।

❑❑